बौद्ध वंदना सुत्तसंग्रह

संपादक

धम्मचारी विमलकिर्ती

धम्मचारी बोधीसागर

त्रिरत्न ग्रंथमाला, पुणे

१९९४

Boudha Vandana Sutta Sangraha
(Pali - Hindi)

प्रथम संकलन १९९४ (हिंदी)

प्रकाशक .

धम्मचारी प्रसन्नरत्न
त्रिरत्न ग्रंथमाला,
धम्मचक्र प्रवर्तन महाविहार
दापोडी, पुणे ४११ ०१२

मुखपृष्ठ :

धम्मचारी रत्नदिप

Printed for free distribution by
The Corporate Body of the Buddha Educational Foundation
11F., 55 Hang Chow South Road Sec 1, Taipei, Taiwan, R.O.C.
Tel: 886-2-23951198 , Fax: 886-2-23913415
Email: overseas@budaedu.org
Website:http://www.budaedu.org
Mobile Web: m.budaedu.org

प्रकाशकीय

पूजा वन्दना तथा बौध्द संस्कार विधि या समारोह के विषय में हम एकाध पुस्तिका प्रकाशित करें ऐसी अनेक लोगोंकी बहुत दिनोंसे मांग थी। शायद बौध्दोंके आचारविधि का यह एक अत्यंत लोकप्रिय अंग हो । तथापि धार्मिक दृष्टिसे वह अत्यंत महत्वपूर्ण होने पर भी सहजतासे भ्रष्ट होने का डर हमेशा ही रहता है क्योंकि, एक तो उससे सहज ही अंधश्रद्धा को बढावा मिलता है अथवा इन सूत्रोंका पठन अथवा विशिष्ट प्रकार का कोई समारोह करने से हमें पुण्यलाभ होगा ऐसी धारणा बन जाती है। प्रचलित हिन्दू समाज को यह दोनों दृष्टि से पूर्णत: स्वीकार है। इसीलिए बौध्दसमाज के लिए अलग-अलग विधि-समारोहोंका निर्माण करते समय बहुत ही सावधानी बरतनी चाहिए और यह कार्य कुछ एक ही दिन में होना सम्भव नहीं है। लेकिन धीरे-धीरे, गलतियों को सुधारते हुए, खोज करते हुए ही आगे बढ़ना होगा। एक ओर विद्यमान सांस्कृतिक आचरणोंसे समाज को विभक्त न करते हुए हमें पूजा और समारोहों की रचना करनी होगी; तो दूसरी ओर, उससे पुराने हिन्दू संस्कारों की जड़ों को पक्का न होने देने की भी सावधानी बरतनी

चाहिए ।

जैसा की भगवान बुध्द ने कहा है, हमने अपनी स्वयं की भाषा में ही धम्म का पठन-पाठन करना चाहिए, इस बात को ध्यान में रखते हुए, इस पुस्तिका में मूल पालि सूत्रों का हिन्दी काव्यमय अनुवाद देना ही उचित हो सकता था। प्रस्तुत गाथाओंका सही काव्यमय अनुवाद उपलब्ध न होने के कारण हमें सीधे गद्य अनुवाद कोही देना पड़ा है । ऐसा होते हुए भी यदि अगर कोई इन सूत्रों का हिन्दी काव्यमय अनुवाद हमें भेजें और उससे धम्म की मूलप्रेरणा सही ढंग से रखी गयी है इसकी संतुष्ठी हमें हो जाय तो हम उसका प्रकाशन अवश्य ही करेंगे ।

इस पुस्तिका के कुछ सूत्रों में 'देव' 'भूत' आदि जैसे शब्दों के प्रयोग हुए है उन्हें एक तो उचित बौद्ध शब्दोंका प्रयोग करके पूर्णरूप से बदलना चाहिए अथवा उन्हें विस्तृत विवरण द्वारा स्पष्ट कर देना चाहिए । किन्तु अभी तक हमें ऐसे उचित शब्द न मिल पाने के कारण हमने ये शब्द वैसे ही रखे हैं फिर भी उनका 'बुध्दयान' के माध्यम से समय-समय पर स्पष्टीकरण किया जायेगा ।

वर्तमान स्थिति में भारत के कुछ प्रान्तों में खास करके महाराष्ट्र के कुछ हिस्सों में काफी लोकप्रियता पानेवाले 'परित्राण पाठ' का हमने इस

पुस्तिका में समावेश नहीं किया है । हिन्दुओंके 'सत्यनारायण' पूजा की ही यह बौध्द आवृत्ति हो रही है ऐसा हमें लगता है । परित्राण पाठ कहनेवाले तथा सुननेवाले इन दोनों को उससे कुछ भी समझ नहीं आता, किन्तु उससे एक ओर सामाजिक मान्यता प्राप्त करना तथा दूसरी ओर, लोगों में अंधश्रध्दा का और दूषित पूर्वमान्यताओंका फायदा उठाकर उन्हे ठग लेना तथा स्वयं की झोली भर लेना, ऐसा कुछ करने का पुरोहित लोगों का स्पष्ट प्रयास दिखाई देता है । लोगोंको प्रबुद्ध करने के प्रयास के बजाय पुरोहितों के उपरोक्त प्रकार के बर्ताव बहुत कुछ कह जाते हैं ।

अल्पावधि में इस पुस्तिका का सम्पादन तथा लेखन करने की बड़ी जिम्मेदारी धम्मचारी विमलकीर्तिने पूरी की है । इस कार्य में उन्हें धम्मचारी धर्मादित्य और अन्य सभी धम्मचारियों द्वारा बहुत ही सहायता हुई है ।हिन्दी अनुवाद के उपरान्त उसके सम्पादन एवम लेखन की जिम्मेदारी धम्मचारी बोधिसागर ने ली है ।

इस पुस्तिका के अनुसार ही सभी बौध्दों को विधि-समारोह करने चाहिए ऐसा हमारा आग्रह नहीं है । यह पुस्तक पूर्णरूपसे अधिकृत मानी जाए ऐसा भी हमारा कहना नहीं । अपितु बौद्धों के विधि-समारोहों

को उचित स्वरूप प्रदान करने की प्रक्रिया में बटाँया हुआ यह एक हाथ है। इस प्रयास से ही भारत के सभी प्रान्तों के बौध्दजन हमारे इस विधि-समारोह का उचित मर्म जानकर उसके अनुरूप उनका आयोजन करेंगे इतनी ही अपेक्षा है।इसके कुछ मतों से कुछ लोग सहमत नहीं होंगे। परन्तु अपना अलग विचार हमें बताया गया तो इस पुस्तिका के अगली आवृत्ति के समय हम विचार कर सकेंगे। इस पुस्तिका में रखा गया दृष्टिकोण यदि सामने रखा तो कोई भी बौध्द मनुष्य सही-सही बौध्द परम्परा से कतई दूर नही जायेगा, इसका हमें पूरा विश्वास है।

- धम्मचारी लोकमित्र

***

प्रस्तावना

'बौध्द-वन्दना सुत्त संग्रह', यह पुस्तिका आपके हाथ देते हुए हमें बहुत ही प्रसन्नता हो रही है । इस पुस्तिका का हर किसी बौध्द व्यक्ति को उचित लाभ होगा ऐंसी आशा है ।

आज भारत के कुछ प्रान्तों में **'बौध्द पुरोहित'** अथवा **'बौध्दाचार्य'** की संख्या काफी मात्रा में बढ़ रही है। भिक्खु भी हिन्दुओंके **'सत्यनारायण'** की भांति **'परित्राण पाठ'** का समारोह करने लगे हैं । परिणाम स्वरूप प्रत्यक्ष धम्माचरण के अलावा विधि-समारोहों को ही अवास्तविक महत्व प्राप्त होने लगा है, विधि समारोह बौध्दोंकी सामाजिक तथा सांस्कृतिक बात है, यही बात शायद भूली जा रही है ।

ईश्वर प्रधान धर्मों में विधि-समारोहों का जैसा दैवी महत्व है, वैसा वह बौध्द धम्म में नहीं । इसीलिए बौध्द धम्म में कर्मकांड निर्माण नहीं हुए हैं । लेकिन यदि हमने आज ही सही सावधानी नहीं बरती, तो बढती हुई पुरोहितशाही के वर्चस्वतले मूल बुध्द शिक्षा को विधि-समारोहोंके नामपर अथवा एक सुत्रीकरण के नामपर केवल कर्मकांडोंका स्वरूप प्राप्त हो जायेगा और फिर कौन-सा समारोह किसने करना चाहिए, कैसा करना चाहिए, इस तरह से बाल की खाल निकालते निकालते धम्म के

आचरण की बात बिल्कुल ही भुला दी जायेगी ।

इस प्रकार यदि धम्म लोगों के आचरण का केंद्र न रहकर केवल विधि-समारोहों का विषय बन बैठा, तो धम्म का अध:पतन हो जाएगा ।

जिस प्रकार समाजविहित अकेले मनुष्य को धर्म की आवश्यकता नहीं होती, उसी प्रकार, सामाजिक संदर्भ के अलावा व्यक्तिगत समारोहों की भी आवश्यकता उत्पन्न नहीं होती । इसीलिए नामकरण, विवाह, पुण्यानुमोदन आदि जैसे समारोह एक व्यक्ति से सम्बन्धित होते हुए भी वे सामाजिक समारोह के रूप में ही मनाये जाते हैं । जन्म लिए हुए बालक का उसके माता-पिता ने किसी भी प्रकार का विधि-समारोह न करते हुए 'नाम' रख दिया तो भी कुछ बिगडता नहीं वैसे ही यौवनावस्था में होनेवाले स्त्री-पुरूष ने कोई भी विधि-समारोह न करके केवल रजिस्टर मैरेज (पंजीकृत विवाह) किया तो भी कुछ बिगडता नहीं । इस का अर्थ यह है कि, कोई भी समारोह धर्म के लिए करना ही चाहिए और यदि न करें तो ईश्वर का कोप होगा, ऐसी अंधी मान्यता निरीश्वरवादी बौध्द धम्म में बिल्कुल ही नहीं है । उसी प्रकार जैसे की भिन्न- भिन्न समाज में स्थानीय परिस्थितिके अनुसार सौजन्यशील तथा आदरसूचक ऐसे सामाजिक आचरणके (Manners and

Customs) भिन्न- भिन्न संकेत रूढ होते हैं, वैसे ही विधि-समारोहों में भी भिन्नता उत्पन्न होती रहती है । ऐसी स्थिति में जो कुछ विधि धम्म के नामपर की जाती है वह अपने धार्मिक आदर्शका अथवा धम्मशिक्षा का पुन: स्मरण करने मात्र तक ही सीमित होते हैं । ऐसा पुन:स्मरण थोडे में भी किया जा सकता है वैसे ही लम्बाचौड़ा (सुत्रपठन) करके भी किया जाता है । इसलिए उसमें एक ही प्रकारकी दृढता (अथवा एकसुत्रता) होनी ही चाहिए, ऐसा नहीं है । यही विशाल दृष्टिकोण सामने रखते हुए इस पुस्तिका का सम्पादन व लेखन कार्य किया है । इसमें मूल पालि सुत्रों के साथ ही उनके हिन्दी अनुवाद भी दिये हैं । उसी के साथ क्या क्या सामाजिक समारोह बौध्दों को करने चाहिए और किस तरहसे करने चाहिए उसके बारे में विस्तारपूर्वक मार्गदर्शन भी किया गया है । अर्थात इस में अभी महाराष्ट्र के समाज में रूढ हुयी कुछ बातें आयी हैं । लेकिन जहाँ-जहाँ ऐसी रूढ बातों के बारेमें हमें संदेह है, वहाँ-वहाँ हमने वह स्पष्ट रूपसे सामने रखा है । इस बात पर पाठक गौर करें और परख करके ही उनको स्वीकार करें यही अपेक्षा है ।इस पुस्तक के प्रकाशन के लिए बहुत सारे लोगो ने मांग की थी, उसी तरह बौध्द जनता की ओर से बडे पैमाने में बार-बार मांग की जाती थी, इसलिए बहुत जल्द

बाजी में इस किताब का प्रकाशन करना पड़ रहा है । लेकिन अधिक गहराई से अध्ययन करने पर उसमें फेर बदल करना पड सकता हैं इस बात को पाठक नोट करें ।

अन्त में पाठकों से नम्र निवेदन है कि वे इस किताब की तरफ अन्य किताबों की तरह और एक अनोखा प्रकार इस दृष्टिकोण से न देखें, तो विचार पूर्वक उसका परिक्षण करें और निष्पक्षता से धम्म के उज्ज्वल भविष्य् का ख्याल मन में रखकर आवश्यक सूचनाएँ भी दें । उसपर निश्चय ही ध्यान दिया जायेगा क्योंकि यह पुस्तक अचूक और परिपूर्ण है ऐसा हमारा दावा नहीं है ।लेकिन हमनें जो दृष्टिकोण स्वीकार किया है उसमें हमें कुछ भी शंका नहीं है ।वही दृष्टिकोण अपने सामने रखकर सभी संस्कार सम्पन्न करें, यही मात्र अपेक्षा है ।

इस पुस्तक के काम में सभी धम्मचारियों ने की हुई चर्चा और समय समय पर दी हुई सूचनाएँ वैसे ही हिन्दी अनुवाद और पाण्डुलिपि बनाने के काम में माननीय धम्मचारी बोधिसागर जी की अनमोल सहायता मिली, इस के लिए सभी का अत्यन्त आभार ।

- धम्मचारी विमलकीर्ति

भूमिका

जिज्ञासु व्यक्ति किसी रचना शैली को महत्व न देकर ग्रंथ अथवा पुस्तिका में निहित अर्थ को महत्व देते हैं । अध्यात्म के क्षेत्र में अध्यात्मिक स्वभाव वालें आचरण शील संतों, भिक्षुओं, आचार्यो एवम धम्मचारियों के धार्मिक प्रवचन बार-बार सुनना चाहिए और बार-बार सुनकर उसका अभ्यास, चिंतन एवम मनन करना चाहिए। जब हम मूल पालि या संस्कृत अथवा मूल पाण्डुलिपि में लिखित बुध्दवचन के सूत्रों-पदों को उनके सही अर्थ सहित बार-बार दोहराते है और उनके प्रति श्रध्दा भाव रखते हैं तो बोधिचित्त का उद्‌गम होना स्वाभाविक है ।

परम पावन दलाई लामा जी ने, धर्मोपदेश सुनते समय धर्म अभ्यास कर्त्ता के लिए चार प्रतिसरण बताये है-

(१) पुरूष का नहीं, धर्म का प्रतिसरण करो ।

(२) शब्द का नहीं, अर्थ का प्रतिसरण करो ।

(३) अर्थो में भी नेयार्थ का नहीं नीतार्थ का प्रतिसरण करो ।

(४) उस नीतार्थ का विवेचन करने वाले मति के भी विज्ञान का नहीं ज्ञान का प्रतिसरण करो ।

रात्रौ यथा मेघघनान्धकारे विद्युत क्षणं दर्शयति प्रकाशम् ।

बुध्दानुभावेन तथा कदाचित् लोकस्य पुण्येषु मतिः क्षणं स्यात् ।

अर्थात जैसे घनघोर अंधेरी बरसात की रात में बिजली की क्षणिक चमक से अल्प समय के लिए प्रकाश हो जाता है उसी तरह सैकडों जन्मों में एक दो बार मानव जन्म मिल पाता है। इस दुर्लभ मानव जीवनकाल में मुश्किल से कभी-कभी पुण्य कर्म की इच्छा अल्प समय के लिए उत्पन्न होती है। अतः इस पुण्य अवसर का लाभ उठाकर पुणकर्म के उत्तरोत्त वृध्दि का यत्न करके अपना जीवन सार्थक बनाना चाहिए । (परमपावन दलाई लामा)

गत १२-१३ वर्षों से 'त्रैलोक्य बौध्द महासंघ सहायक गण ' नामक एक बौध्द संघ मूलतः महाराष्ट्र राज्य में कार्यरत है । इस 'त्रैलोक्य बौध्द महासंघ ' के संस्थापक, प्रणेता एवम धम्मानुदेशक पूज्य ' भंते महास्थविर संघरक्षित जी मूलतः एक इंग्लिश भाषी भिक्षु हैं और वर्तमान जगत में बौध्द धर्म के सभी सम्प्रदायों के धार्मिक ग्रंथों एवम निकायों का गहन अध्ययन करके आज के इस वैज्ञानिक युग में भगवान बुध्द के मूल दर्शन को कैसे व्यावहारिक बनाया जा सकता है और बहुजन हिताय-बहुजन सुखाय की मानव कल्याण की भावना से जगत में कैसे शांति स्थापित की जा सकती है, इन तथ्थों को मध्यान्ह रखकर प्रशिक्षित

आदर्श बौध्द धम्म सेवकों का सृजन कर रहे हैं जिन्हें धम्मचारी एवम् धम्मचारीनी के नाम से पुकारा जाता है ।

'त्रैलोक्य बौध्द महासंघ सहायक गण' के अंतर्गत ' त्रिरत्न ग्रंथमाला' नामक संस्था ' महासंघ ' के सभी प्रकाशन सम्बन्धी कार्य देखती है । इस संस्था द्वारा ' बौध्द वन्दना सुत्तसंग्रह ' मूलतः मराठी भाषा में सम्पादित किया गया था जो समस्त महाराष्ट्र के बौध्द समाज में लोकप्रिय है । परन्तु धीरे धीरे ' त्रैलोक्य बौध्द महासंघ सहायक गण' (मुख्यालय पूणे) का विस्तार गुजरात, आन्ध्रप्रदेश, गोवा, कर्नाटक, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश- दिल्ली आदि राज्यों में बढ़ रहा है । अतः "बौध्द वन्दना सुत्तसंग्रह" का मराठी भाषा से हिन्दी में अनुवाद करना आवश्यक समझा गया ताकि अधिकतर जनता उसका लाभ उठा सके ।

मैंने यह जिम्मेदारी ली कि मराठी बौध्द वन्दना सुत्तसग्रह का हिन्दी में अनुवाद करके इसे जल्दी से जल्दी प्रकाशित कराऊँ । परन्तु इस कार्य में देरी हुई क्योंकि मैं मराठी नहीं जानता हूँ। केवल कामचलाऊ समझ लेता हूँ । अतः मैंने अपने मराठी भाषी धम्म बन्धुओं से सहायता लेकर इस वन्दना सुत्तसंग्रह का हिन्दी में मात्र संकलन किया

है। परन्तु यह हिन्दी संस्करण मराठी से हिन्दी में 'ज्यों का त्यों' अनुवादित नहीं है। मूल भावना में परिवर्तन किये बिना हिन्दी रुपान्तर संशोधित तथा परिवर्तित रूप में है जिसे ' त्रिरत्न ग्रंथमाला ' न्यास से अनुमोदित कराया गया है। धम्मचारी लोकमित्र का प्रकाशकीय तथा धम्मचारी विमलकीर्ति की प्रस्तावना में कोई संशोधन नहीं किया गया। ये मूल रूप में हैं। प्रथम भाग के अध्याय ' पूजास्थान क्यों ? और पूर्वतैयारी' में संशोधन करके ' पूजा के महत्व ' को विस्तार से रखा गया है और पूजा स्थल विधि में मामूली संशोधन किया है। परन्तु पालि वन्दना हिन्दी अर्थ के साथ 'ज्यों का त्यों' रखा गया है। द्वितीय भाग संस्कार विधि-परिच्छेद में थोडा संशोधन उत्तर भारत के बौध्द समाज को ध्यान में रखकर किया गया है परन्तु विधि क्रम बदला नहीं गया है। अन्त में एक और विवाह सम्बन्धी परिशिष्ट जोड दिया गया हैं।

इस हिन्दी संस्कारण के सम्पादन कार्य में धम्मचारी कमलवीर, अमृतदीप तथा अभयराजा ने मराठी भाषा से हिन्दी अनुवाद में सहायता की, मैं इन धम्मबन्धुओं का पुण्यानुमोदन करता हूँ तथा आभार मानता हूँ। साथ ही साथ मै डा. चन्द्र स्वरूप (धम्ममित्र) का सह्रदय से आभार मानता हूँ कि उन्होंने इसे प्रकाशित कराने हेतू प्रुफ तथा भाषा को सही

करने की जिम्मेदारी ली । त्रिरत्न ग्रंथमाला न्यास का मैं आभारी हूँ और विशेष रूप से धम्मचारी लोकमित्र का आभार प्रकट करता हूँ कि उन्होंने इसे प्रकाशित कराने के लिए विशेष सहायता की ।

धन्यवाद

भवतु सब्ब मंगलम

भवदीय

धम्मचारी बोधीसागर

अनुक्रमणिका

प्रथम भाग : सूत्र संग्रह

द्वितीय भाग : संस्कार परिच्छेद

प्रथम भाग :

१. पूजा का महत्व

अति प्राचीन समय से ही सभी प्रचलीत धर्मों में अपने अपने मत व श्रद्धानुसार अपने अपने मुक्तीदाताओं अथवा मार्गदाताओं की विशिष्ट पूजा होती आई है । पूजा मनोकामना परिपूर्ण हेतू अथवा इच्छित फल प्राप्ति हेतू अथवा आध्यात्मिक भाव से चित्त की परिशुद्धि हेतू अपने अपने भगवान की आराधना की अभिव्यक्ती है ।ईश्वरीय प्रधान धर्मों में यह पूजा वंदना - मूर्ति पूजा - मूर्ति तर्पण, मान्य धार्मिक ग्रंथों व काव्यों के देव -देवियों की स्तुति व स्वर्ग प्राप्ति हेतू तरह - २ की बलि भी दी जाती है । कोई कोई काया कष्ट के साथ कठिन तपस्या करता है तो कितने ही कर्मकाण्ड व तीर्थ व्रत देशाटन में व्यस्त रहते हैं ।

यहाँ प्रश्न उत्पन्न होता है कि बौद्ध धर्म मे पूजा का क्या स्थान है ? बौद्ध धर्म में जब ईश्वर अर्थात किसी अद्‌भुत मायावी, रहस्यमयी सर्वव्यापक, सर्व शक्तिशाली, भाग्य विधाता, समस्त ब्रह्माण्ड के रचयिता जैसी अपौरुषेय शक्ति का अस्तित्व ही नहीं है तो पूजा किस की ? और यदी ईश्वर विहीन दर्शन से इस भौतिक शरीर का मरणोपरान्त प्रत्येक अवयव अपने अपने महाभूतों में विलीन हो जाता है और शेष सब बुझ जाता है तो पुनरागमन किस का ? और पूजा किस की ?

ऐसे बहुत से जटिल प्रश्न आज के इस वैज्ञानिक युग के बुद्धिवादी के मन में चक्कर काटते रहते हैं और वह कोरा सिद्धान्तवादी बन जाता है और जीवन पर्यन्त वास्तविक मानवतावादी, कल्याण की जीवन स्त्रोत की पवित्र करूणामयी धारा में नहाने से प्राप्त परम शांति के सुख से वंचित रहता है तो दूसरी ओर अन्धश्रद्धा के वशीभूत कोई उपासक केवल मूर्ति पूजा, ग्रन्थों का पठन व मन्त्रोच्चारण में संलग्न रहकर इसे ही मुक्ति का मार्ग समझ बैठता है ।

अतः परम पूज्य भंते महास्थविर संघरक्षित *ने स्वयं ध्यान -साधना एवम् चिंतन मनन करके तथा साथ ही साथ तीनों यानों अर्थात हीनयान, महायान व वज्रयान का तुलनात्मक अध्ययन करने के उपरान्त धम्मानुसरीत (सिद्धान्तवादी) व सद्धानुसरीत (भक्तिभावनावादी) के मध्य अंतर्निहीत विभेद मूलक भ्रम का निवारण किया है । भंते संघरक्षित जी ने बताया है कि धम्मानुसरीत वह व्यक्ति है जो आध्यात्मिक जीवन हेतू तथा बुद्धत्व प्राप्ती हेतू एक बुद्धिवादी दृष्टिकोन रखता है अर्थात वह एक कोरी व निरीह आध्यात्मिक सोच के साथ बौद्धिक चिंतन के अधीन रहता है ।धर्म का अभ्यास केवल धार्मिक

---

* भंते संघरक्षित जी त्रैलोक्य बौद्ध महासंघ सहाय्यक गण के संस्थापक एवम् बौद्ध धर्म के विश्व प्रसिद्ध धम्मानुदेशक हैं ।

ग्रंथो के आधार पर करता है तथा स्वयं अपने पर ही विश्वास व गर्व करता है । किसी अन्य आध्यात्मिक गुरु के सानिद्ध में रहकर विधिवत विनय के साथ धर्म का अभ्यास करने या सीखने में उसका विश्वास नहीं रहता व अपने ही धार्मिक बौद्धिक दर्शन में खोया रहता है । तो दूसरी ओर सद्धानुसरीत व्यक्ती है जो बौद्ध धर्म के गहन प्रगाढ एवम् गंभीर दर्शन में प्रवेश करने की चिंता नहीं करता बल्कि वह तो पूर्ण आध्यात्मिक भक्ति के साथ समर्पित भाव से अपने आध्यात्मिक गुरु के पदचिन्हों पर चलकर उसी (गुरु के) के बताये निर्देशों पर चलना अपना धर्म समझता है और अपने जीवन को धर्ममय बनाता है । इनके अतिरिक्त बुद्ध का एक तीसरा अनोखा शिष्य होता है जो कायसक्खी कहलाता है और कठिन योग साधना से अपने ही भौतिक शरीर से विलग होकर एक उच्चतर आध्यात्मिक एवम् लोकोत्तर धर्मकाया का परम सुख प्राप्त करता है ।

इस प्रकार तीनो ही प्रकार के शिष्य उपासक बुद्ध धर्म के प्रति समर्पित है और अपने अपने ढंग से ज्ञान एवंम् अनुभव प्राप्त करके त्रिरत्नों (बुद्ध, धम्म, संघ) के प्रति सरणागत हो जाते हैं । परंतु जब एक सर्वसाधारण उपासक पूर्ण विकसित ज्ञानी-ध्यानी, अनासक्त, अन्तिम

सत्य के खोजक, निर्वाण प्राप्त एवं मार्गदाता के प्रति आस्थावान हो जाता है और ऐसा मार्गदाता जब ऐतिहासिक गौतम बुद्ध हो जिसने चार आर्यसत्य - दुख, दुःख का कारण, दुःख के कारण का निवारण एवम् निवारण के मार्ग -आर्य अष्टांगिक मार्ग - की खोज कर के बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय व बहुजन कल्याणार्थ मार्ग प्रशस्त किया, फलस्वरूप ऐसे आदर्श महामानव के प्रति कृतज्ञता की अभिव्यक्ती भक्तिभावना के रूप में पूजा के स्वरूप में प्रदर्शित होना स्वाभाविक है ।

अतः निष्कर्ष यह निकलता है कि संसार के उच्चतम आदर्श भगवान बुद्ध, उनकी सीख, धर्म और उन ऊच्च आदर्शों पर चलनेवाले उच्च आध्यात्मिक व्यक्तियों के कुल-संघ इन त्रिरत्नों के प्रति जागरुकता के साथ श्रद्धाभाव से भावनिक प्रतिसाध स्वरूप अपना पूर्ण समर्पण एवम् अर्पण है । इन त्रिरत्नों के ऊच्च आदर्शों का अपने जीवन में स्वयं अनुभव प्राप्त करने के लिए उस आध्यात्मिक अनुभवों से प्राप्त सुख की अनुभूति लेने के लिए हम उस महापुरुषों एवं पूज्य महानुभावों के प्रति आकर्षित हो जाते हैं जिन्होंने यह उच्च आध्यात्मिक अनुभव प्राप्त करके परम शांन्ति के साथ निर्वाण लाभ का आनन्द लिया है और इस संसार के अशांत एवम् अविद्या रूपी अन्धकार को दूर करके सत्य रूपी

प्रकाश का उजाला किया है । अतः हमे बुद्ध, धम्म व संघ जैसे ऊच्च आदर्शों के प्रति कृतज्ञता प्रकट करनी चाहिए और अपने अन्दर और बाहर संतोष के साथ खुशी का वातावरण सृजित करना चाहिए। और प्रयत्न करना चाहिए कि हम स्वयं भी उन्ही ऊच्च आदर्शोपर चलकर बुद्धत्व लाभ प्राप्त कर सके ।

२. पूजा स्थल एवम् विधि

त्रैलोक्य बौध्द महासंघ सहाय्यक गण के केन्द्रों पर आध्यात्मिक वातावरण सृजित करने के लिए वंदना एवम् ध्यानसाधना हेतू आमतौर पर एक अलग कमरें का प्रबन्ध किया जाता है । और उस कमरें के एक कोने में एक सुन्दर व आकर्षक पूजा स्थल बनाया जाता है, ताकि नव आगन्तुक उपासक का मन धर्ममय बन जाए। यह पूजा स्थल एक लकडी या सिमेण्ट का बनाया जाता है । इस प्रकार बने प्लेटफार्म या चबूतरे को भिन्न भिन्न रंगों के कपड़ों के उचित आकार के टुकड़ो से सजाया जाता है तथा प्लेटफार्म के ठीक बीच में भगवान बुद्ध की मूर्ति पद्मासन में बैठायी जाती है । मूर्ति काष्ट या धातू की हो सकती है । फूल, फूल-पत्तियों से भरपूर दो गमले दोनो कोनों पर रखना चाहिए । भगवान बुध्द की मूर्ति के थोडा नीचे बोधिसत्वों जैसे बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर आदि की मूर्तियाँ रखी जा सकती हैं ।

पूजा स्थल की चौकी पर भगवान बुध्द की मूर्ति के सम्मुख भेंट स्वरूप अर्पण की अन्य वस्तुएँ रखी जाती हैं । जैसे तस्तरी में कटे हुए फूल, जलती हुई मोमबत्तियाँ तथा अगरबतियाँ आदि एक सुन्दर ढंग से लाइनों में सजाई जाती हैं। इस प्रकार यह एक सुन्दर पूजास्थल नवागून्तकों एवम् श्रध्दालुओं के मन को मोह लेता है ।

पूजा के समय भेंट स्वरूप रखी ये अर्पण की वस्तुएँ केवलमात्र

सजावट के लिए नहीं हैं बल्कि इनका अपना अपना महत्व है। जैसे फूल अनित्य का प्रतीक है अर्थात इस लोक में जो कुछ भी उत्पन्न हुआ है वह स्थायी नहीं है, या नित्य नहीं है बल्कि अवश्य विनाश को प्राप्त होनेवाला है । आज की अवस्था कल वैसी ही नहीं रहेगी बल्कि परिवर्तन को प्राप्त होगी । अत: परिवर्तन प्रकृति का अटल नियम है और आज का खिलता हुआ सुन्दर फूल कल मुरझाने वाला है। यही अनित्यता की ओर संकेत है। मोमबत्ती की 'लौं' का प्रकाश चारो ओर फैलता है और अन्धेरे को दूर करता है। इसी प्रकार प्रकाश रूपी सत्य (प्रज्ञा) अन्धकाररूपी अविद्या (मोह, अज्ञान) का विनाश करता है। और तीसरा प्रतीक अगरबत्ती अपनी सुगन्ध से पूरे पूजा व ध्यानसाधना के कमरे को भर देती है उसी प्रकार शीलवान व्यक्ति का जीवन संसार में गौरवान्वित होकर अपने अच्छे पुण्य कर्मो की सुगन्ध बखेरता है। इस प्रकार उपासक भगवान बुध्द और बोधिसत्वों के प्रति परम्परागत तीन वस्तुएँ भेंट करके अपना भक्तिभाव व्यक्त करते हुए कृतज्ञता प्रकट करता है।

पूजा स्थान में प्रवेश करते समय ही प्रत्येक उपासक-उपासिका को पंचांग प्रणाम (दोनो हाथ, सिर और दोनो पैर से) के माध्यम (विधि) से भगवान बुध्द और बोधिसत्वों की मुर्तियों के सम्मुख नतमस्तक हो प्रणाम - वन्दना करना चाहिए या सम्पूर्ण शरीर से लेट कर श्रध्दा का

प्रदर्शन करना चाहिए। ध्यान साधना, धम्मवर्ग, पूजा की समाप्ति के उपरान्त बाहर जाने से पहले एक बार पुन: पूजा स्थल पर विराजमान भगवान बुध्द और बोधिसत्वों के रूपों को झुककर प्रणाम करना चाहिए।

भगवान बुध्द एवम् बोधिसत्वों की मूर्तियों के सम्मुख शारीरिक रूप से नतमस्तक होना, नमन करना एक प्रकार से भक्तिभाव से उच्च आदर्शों के प्रति सम्मान जताना है, जो अन्धश्रध्दा नहीं बल्कि उच्च आध्यात्मिक परम्परा का प्रतीक स्वरूप है। यह हमारे अन्त: करण में उठने वाली खुशी व प्रीति की उमंगों की तरंगों की अनुभूति की अभिव्यक्ति है जो बिलकुल भी अन्धश्रध्दा या अन्धविश्वास नही हो सकता। बल्कि सम्यक सम्बोधि प्राप्ति के मार्ग पर आरूढ होने के लिए साधन मात्र है। अपने अन्दर बुध्दत्व के बीज का प्रस्फुटन होकर पूर्ण बोधिवृक्ष विकसित होने तक हमें अपने पूर्ववर्ती बुध्दों, बोधिसत्वों के आदर्शों का सम्मान जनक प्रदर्शन पूजा सूचक प्रतीकों के रूप में व्यक्त करना अस्वाभाविक नहीं है । यह मात्र प्रदर्शन ही नहीं है बल्कि सकारात्मक भावना अथवा सकारात्मक कुशल भावना विकसित करने के लिए हमारा अभ्यास है और एक विशिष्ट अनुष्ठान है।

हम भगवान बुध्द और बोधिसत्वों के प्रति शारीरिक और उपरोक्त

भेंट अर्पण करने के अतिरिक्त सम्मानपूर्वक आदर सत्कार स्वरूप उनके महान गुणों की स्तुती पालि भाषा में वर्णित सूत्रों का एक साथ एक स्वर में लय के साथ उच्चारण करते हुए पठन करते हैं जो उस समय के आध्यात्मिक वातावरण में एक उच्च कोटि की गहन भावना भर देता है । लगन तथा मनन के साथ बन्दना करने का अपना अलग ही एक महत्व, एक आनन्द होता है ।

इस प्रकार बुध्द, धम्म एवम् संघ स्वरुप त्रिरत्न बौध्द धर्म का हृदय है । भगवान बुध्द न केवल मानव के सम्पूर्ण विकास के मार्ग को प्रशस्त करने वाले गुरू हैं बल्कि स्वयं भगवान बुध्द सम्यक् सम्बुध्द हैं तथा उनका स्वयं के अनुभवों पर आधारित सच्चा मार्ग - आर्य अष्टांगिक मार्ग-धर्म है और उसपर चलने वाले श्रावकों का यह आर्य संघ है । इन त्रिरत्नों के प्रति हमारी सच्ची श्रध्दा ही हमें लोकोत्तर सरणगमन का अनुभव करायेगी और यह श्रध्दा भक्तिभाव से पूजा में अभिव्यक्त होती है ।

***

वन्दना

अरहं सम्मासम्बुध्दो भगवा, बुध्दं भगवन्तं अभिवादेमि ।
स्वाक्खातो भगवता धम्मो, धम्मं नमस्सामि ।
सुप्पटिपन्नो भगवतो सावकसंघो, संघं नमामि ।

वन्दना

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स ।
नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स ।
नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स ।

सरणत्तयं

बुद्धं सरणं गच्छामि ।
धम्मं सरणं गच्छामि ।
संघं सरणं गच्छामि ।
दुतियम्पि बुद्धं सरणं गच्छामि ।
दुतियम्पि धम्मं सरणं गच्छामि ।
दुतियम्पि संघं सरणं गच्छामि ।
ततियम्पि बुद्धं सरणं गच्छामि ।
ततियम्पि धम्मं सरणं गच्छामि ।
ततियम्पि संघं सरणं गच्छामि ।

वन्दना

अर्हत (जीवनमुक्त) सम्यक् सम्बुद्ध (संपूर्ण जागृत) भगवान् (भाग्यवान) ऐसे बुद्ध भगवान को मैं अभिवादन करता हूँ ।

उस भगवान के स्वयं उपदेश किये हुए धम्म को मैं नमस्कार करता हूँ ।

सुमार्गपर प्रतिष्ठित भगवन्त के श्रावक संघ को मैं नमन करता हूँ ।(हर वंदना समय पञ्चांग प्रणाम करें ।)

वंदना

उन भगवान अर्हत (जीवनमुक्त) सम्यक् सम्बुद्ध (सम्पूर्ण जागृत) को नमस्कार हैं (तीन बार)

त्रिशरण गमन

मैं बुद्ध को अनुसरण करता हूँ ।
मैं धर्म को अनुसरण करता हूँ ।
मैं संघ को अनुसरण करता हूँ ।
दुसरी बार मैं बुद्ध को अनुसरण करता हूँ ।
दुसरी बार मैं धर्म को अनुसरण करता हूँ ।
दुसरी बार मैं संघ को अनुसरण करता हूँ ।
तीसरी बार मैं बुद्ध को अनुसरण करता हूँ ।
तीसरी बार मैं धर्म को अनुसरण करता हूँ ।
तीसरी बार मैं संघ को अनुसरण करता हूँ ।

पंचसीलानि

पाणातिपाता वेरमणि सिक्खापदं समादियामि ।

अदिन्नादाना वेरमणि सिक्खापदं समादियामि ।

कामेसु मिच्छाचारा वेरमणि सिक्खापदं समादियामि ।

मुसावादा वेरमणि सिक्खापदं समादियामि ।

सुरा-मेरय-मज्ज पमाद्ट्ठाणा वेरमणि सिक्खापदं समादियामि ।

साधु, साधु, साधु,

नकारात्मक पंचशील

१. मैं प्राणी हिंसा से विरत रहने की शिक्षा ग्रहण करता हूँ/ करती हूँ ।

२. मैं बिना दिये को लेने (चोरी) से विरत रहने की शिक्षा ग्रहण करता हूँ / करती हूँ ।

३. मैं काम- मिथ्याचार से विरत रहने की शिक्षा ग्रहण करता हूँ / करती हूँ ।

४. मैं झूंठ बोलने से विरत रहने की शिक्षा ग्रहण करता हूँ / करती हूँ ।

५. मैं सभी प्रकार की मदिरा एवं अन्य मादक वस्तुओं के सेवन से विरत रहने की शिक्षा ग्रहण करता हूँ / करती हूँ ।

सकारात्मक पंचशील

१. मैत्रीपूर्ण कर्म करके मैं अपने शरीर को शुद्ध करता हूँ ।

२. मुक्त हस्त से दान करके मैं अपने शरीर को शुद्ध करता हूँ ।

३. शांति, सादगी तथा संतुष्ठि का पालन करके मैं अपनी शरीर को शुद्ध करता हूँ ।

४. सत्यतापूर्ण व्यावहारसे मैं अपनी वाणी को शुद्ध करता हूँ ।

५. स्मृती सुस्पष्ट और प्रदीप्त रखकर मैं अपने मन को शुद्ध करता हूँ ।

१४ अक्तुबर १९५६ के दिन धर्मान्तरण के अवसर पर बाबा साहेब डा. अम्बेडकर द्वारा दी गई २२ प्रतिज्ञाएँ

१) मै ब्रह्मा, विष्णू और महेश इनको ईश्वर नहीं मानूँगा और न इनकी पूजा करूँगा ।
२) मैं राम और कृष्ण को ईश्वर (देवता) नहीं मानूंगा और उनकी उपासना नहीं करूँगा ।
३) मै गौरी गणपति इत्यादि हिन्दू धर्म के किसी देवी देवताओं को नहीं मानूँगा और नहीं उनकी उपासना करूँगा ।
४) ईश्वर ने अवतार लिया है इस पर मेरा विश्वास नहीं ।
५) भगवान बुद्ध विष्णू के अवतार हैं यह झूठा और बुद्धिहीन प्रचार है ऐसा मैं समझता हूँ ।
६) मैं श्राध्दपक्ष नही करूँगा, नही पिण्डदान दूँगा ।
७) मैं बौद्ध धर्म के विरूद्ध किसी भी प्रकार का आचरण नही करूँगा ।
८) मैं कोई भी क्रियाक्रम ब्राह्मणों के हाथों नहीं करवाऊँगा ।
९) सभी मनुष्य मात्र समान हैं ऐसा मैं मानता हूँ ।
१०) मैं समता स्थापित करने का प्रयत्न करूँगा ।
११) मैं भगवान बुद्ध के द्वारा बताये गये आर्य अष्टांगिक मार्ग का

अवलम्बन करूँगा ।

१२) मैं भगवान बुद्ध (द्वारा) बताई दस पारमिताओं का पालन करूँगा ।

१३) मैं सभी प्राणीयों के प्रति दया भाव रखूँगा ।

१४) मैं चोरी नहीं करूँगा ।

१५) मैं झूठ नहीं बोलूँगा ।

१६) मैं व्यभिचार नहीं करूँगा ।

१७) मैं शराब नहीं पीऊँगा ।

१८) ज्ञान, शील और करूणा इन बौद्धधर्म के तीन तत्वों का समन्वय करके मैं अपने जीवन को ढालूँगा । (चलाऊँगा)

१९) मैं अपने पुराने, मनुष्यमात्र के उत्कर्ष के लिए हानिकारक और मनुष्यमात्र को असमान और नीच मानने वाले, हिन्दू धर्म का त्याग करता हूँ और बौद्ध धर्म को स्वीकार करता हूँ ।

२०) वह सद्धर्म है ऐसा मैं समझता हूँ ।

२१) आज मुझे नया जीवन मिला है, ऐसा मैं मानता हूँ ।

२२) इतःपर मैं बुध्द की शिक्षा-अनुसार आचरण करूँगा ऐसी प्रतिज्ञा करता हूँ ।

बुद्धपूजा

वण्ण- गन्ध- गुणोपेतं एतं कुसुमसन्ततिं ।
पूजयामि मुनिन्दस्स, सिरीपाद सरोरूहे ।१ ।
पूजेमि बुद्धं कुसुमेन नेन पुञ्ञेन मेत्तेन लभामि मोक्खं ।
पुप्फं मिलायति यथा इदं मे,
कायो तथा याति विनासभावं ।२ ।
घनसारप्पदित्तेन, दीपेन तम धंसिना ।
तिलोक दीपं सम्बुद्धं पूजयामि तमोनुदं ।३ ।
सुगन्धि काय - वदनं, अनन्त - गुण - गन्धिना ।
सुगंधिना, हं गन्धेन, पूजयामि तथागतं ।४ ।
बुद्धं धम्मं च संघं सुगततनुभवा धातवो धातुगब्भे ।
लंकायं जम्बुदीपे तिदसपुरवरे नागलोके च थूपे ।५ ।
सब्बे बुद्धस्स बिम्बे सकलदसदिसे केसलोमादिधातुं वन्दे ।
सब्बेपि बुद्धं दसबलतनुजं बोधिचेत्तियं नमामि ।६ ।
वन्दामि चेतियं सब्बं सब्बट्ठानेसु पतिट्ठितं
सारीरिक- धातु महाबोधिं बुद्धरूपं सकलं सदा ।७ ।

बुद्धपूजा

इस वर्ण और गन्ध ऐसे गुणों से युक्त इन पुष्पों से गूंथी हुई मालाओं द्वारा मैं भगवान बुद्ध के कमलवत श्री चरणों की पूजा करता हूँ ॥१ ॥

इन कुसमों (पुष्पों) से मैं बुद्ध की पूजा करता हूँ, इस पुण्य से मुझे निर्वाण प्राप्त होगा । जिस प्रकार यह फूल कुम्हलाता है उसी प्रकार मेरा शरीर भी विनाश को प्राप्त होता है ॥२ ॥

अन्धकार को नष्ट करने वाले जलते हुए दीप के समान मैं तीनो लोकों के प्रदीप तुल्य अज्ञान-अन्धकार को नष्ट करने वाले भगवान बुद्ध की पूजा करता हूँ ॥३ ॥

मैं सुगन्धियुक्त शरीर एवम् मुखवाले, अनन्त गुण युक्त सुगन्धि से तथागत की (सुगन्धि की गन्ध से) पूजा करता हूँ ॥४ ॥

बुद्ध, धम्म तथा संघ एवम् श्री लंका, जम्बुदीप, नागलोक और त्रिदसपूर में स्थित स्तूपों में भगवान बुद्ध के शरीर के जितने भी अवशेष स्थापित हैं, उन सबको मै प्रणाम करता हूँ ॥५ ॥

सर्व दस दिशाओं मे व्याप्त बुध्द के केश, लोम आदि अवशेषों के जितने भी रूप हैं उन सबको, सब बुध्दों को, दसबलतनुजों को और बोधिचैत्यों को मैं नमस्कार करता हूँ ॥६ ॥

सभी स्थानों में प्रतिष्ठित चैत्य, बुद्ध, शरीर के अवशेष, महाबोधिवृक्ष और बुद्ध प्रतिमाओं की सदा वन्दना करता हूँ ॥७ ॥

तिरतन वन्दना

१. बुध्द वन्दना

इति पि सो भगवा अरहं, सम्मासम्बुद्धो,
विज्जाचरणसम्पन्नों, सुगतो, लोकविदू, अनुत्तरो,
पुरिसदम्मसारथि, सत्था देव- मनुस्सानं, बुध्दो भगवा'ति
बुध्दं याव जीवितं सरणं गच्छामि ॥१ ॥

ये च बुध्दा अतीता च, ये च बुध्दा अनागता ।
पच्चुपन्ना च ये बुध्दा, अहं वन्दामि सब्बदा ॥२ ॥

नत्थि मे सरणं अञ्ञम्, बुध्दो मे सरणं वरं ।
एतेन सच्चवज्जेन होतु मे जयमङ्गलं ॥३ ॥

उत्तमङ्गेन वन्दे हं पादपंसुवरूत्तमं
बुध्दे यो खलितो दोसो, बुध्दो खमतु तं ममं ॥४ ॥

त्रिरत्न वन्दना

१. बुद्ध वन्दना

वे भगवान अर्हत हैं, वे सम्यक् सम्बुद्ध हैं, सभी सद्-विद्याओं और सदाचरणों से युक्त हैं, सद्गति को प्राप्त हैं, सभी लोकों के जानकार हैं, सर्वश्रेष्ठ हैं, (पथ भ्रष्ट घोडों की तरह) भटके हुए लोंगों को सही मार्ग पर ले आने वाले कुशल सारथी हैं, देव और मनुष्यों के शास्ता (आचार्य) हैं ।

मैं जीवन भर के लिए उन बुद्ध की शरण जाता हूँ ॥१ ॥

भूतकाल में जो बुद्ध हुए हैं, भविष्य में जो बुद्ध होंगे व वर्तमान में जो बुद्ध हैं, मैं उन सबकी सदा वन्दना करता हूँ ॥२ ॥

अन्य कोई मेरी शरण नहीं है केवल बुद्ध ही उत्तम शरण हैं, इस सत्य वचन से मेरा जय और मंगल हो ॥३ ॥

मैं उन भगवान बुद्ध की सर्वोत्तम चरण धूलि की सिर से वन्दना करता हूँ । यदि बुद्ध के प्रति मुझ से कोई दोष हुआ हो तो बुद्ध मुझे क्षमा करें ॥४ ॥

२. धम्म - वन्दना

स्वाक्खातो भगवता धम्मो सन्दिट्ठिको अकालिको
एहिपस्सिको ओपनाय्यिको पच्चतं वेदितब्बो विञ्ञुही ' ति ।
धम्मं याव जीवितं सरणं गच्छामि ॥१ ॥

येच धम्मा अतीता च, ये च धम्मा अनागता ।
पच्चुप्पन्ना च ये धम्मा, अहं वन्दामि सब्बदा ॥२ ॥

नत्थि में सरणं अञ्ञम् धम्मो मे सरणं वरं ।
एतेन सच्चवज्जेन होतु मे जयमङ्गलं ॥३ ॥

उत्तमङ्गेन वन्दे हं, धम्मञ्च दुविधं वरं ।
धम्मे यो खलितो दोसो, धम्मो खमतु तं ममं ॥४ ॥

२.धर्म वन्दना

भगवान का धर्म अच्छी तरह कहा गया है । वह सही दृष्टि प्रदान करने वाला है । वह तत्काल फल देने वाला है । कालान्तर में नही, अपितु 'आओ और इसे देख लो ' यह कहलाने के योग्य है । यह निर्वाण तक पहूँचाने वाला है और विद्वानों द्वारा जानने के योग्य है ।

मैं जीवन भर के लिए धर्म की शरण जाता हूँ ॥१ ॥

मैं भूतकाल, भविष्य व वर्तमान के बुद्धों द्वारा उपदिष्ट धर्मो की सदा वन्दना करता हूँ ॥२ ॥

अन्य कोई मेरी शरण नहीं है, केवल धर्म ही उत्तम शरण है । इस सत्य वचन से मेरा जय और मंगल हो ॥३ ॥

मैं दोनों प्रकार के (व्यवहारिक एवम् परमार्थिक) श्रेष्ठ धर्मो की सिर से वन्दना करता हूँ । यदि धर्म के प्रति मुझसे कोई दोष हुआ हो तो धर्म मुझे क्षमा करें ॥४ ॥

३. संघ वन्दना

सुप्पटिपन्नो भगवतो सावकसंघो, उजुप्पटिपन्नो भगवतो
सावकसंघो, ञायप्पटिपन्नो भगवतो सावकसंघो,
सामीचिप्पटिपन्नो भगवतो सावकसंघो,
यदिदं चत्तारि पुरिसयुगानी अट्ठ पुरिस पुग्गला
एस भगवतो सावकसंघो, आहुनेय्यो, पाहुनेय्यो,
दक्खिणेय्यो, अञ्जलिकरणीयो, अनुत्तरं पुञ्ञक्खेतं
लोकस्सा' ति ॥
संघं याव जीवितं सरणं गच्छामि ॥१ ॥
ये च संघा अतीता च, ये च संघा अनागता ।
पच्चुप्पन्ना च ये संघा, अहं वन्दामि सब्बदा ॥२ ॥
नत्थि मे सरणं अञ्ञम्, संघों मे सरणं वरं
एतेन सच्चवज्जेन, होतु मे जयमङ्गलं ॥३ ॥
उत्तमङ्गेन, वन्दे हं, संघं च तिविधुत्तमं ।
संघे यो खलितो दोसो, संघो खमतु तं ममं ॥४ ॥

३. संघ वंदना

भगवान का श्रावक संघ (शिष्य संघ) उत्तम मार्ग पर सुप्रिष्ठित है । भगवान का श्रावक संघ सरल मार्गपर प्रतिष्ठित है, भगवान का श्रावक संघ न्याय मार्ग पर आरूढ है, भगवान का श्रावक संघ उचित मार्ग पर आरूढ है ।

भगवान का यह श्रावक संघ चार [१] प्रकार से पहुंचे हुए युग्मों और आठ [२] प्रकार के श्रेष्ठ पुरूषों से विभूषित है ।

यह आमन्त्रित करने के योग्य है, यह पाहुना(अतिथ्य सत्कार) बनाने योग्य है, यह दान देने योग्य है, यह हाथ जोड वंदन करने योग्य हैं, यह लोक में पुण्य का सर्वोत्तम क्षेत्र है और सभी जनो का सच्चा साथी है ॥१ ॥

मैं जीवन भर के लिए ऐसे संघ की शरण जाता हूँ । अतीत में जो ऐसे संघ रहे, भविष्य में जो ऐसे संघ होंगे और वर्तमान में जो ऐसे संघ है मैं उन सबकी वंदना करता हूँ ॥२ ॥

अन्य कोई मेरी शरण नहीं है केवल संघ ही उत्तम शरण हैं, इस सत्य वचन से मेरा जय और मंगल हो ॥३ ॥

मै तीन प्रकार (काया, वाचा, मन) से उत्तम और पवित्र उस संघ की सिर से वंदना करता हूँ । यदि संघ के प्रति अनजाने में मुझ से कोई गलती हुई हो तो संघ मुझे माफ करें ॥४ ॥

---

१) श्रावक संघ के चार युग्म (जोडे) - श्रोतापत्ती मार्ग और फल प्राप्त, सकृदागामी मार्ग व फल प्राप्त, अनागामी मार्ग फल प्राप्त तथा अर्हत् मार्ग व फल प्राप्त ।

२) श्रावक संघ के आठ पुरूष:- १. स्रोत पत्ती मार्गप्राप्त २. स्रोतापत्ती फल प्राप्त ३. सकृदागामी मार्ग प्राप्त ४. सकृदागामी फल प्राप्त ५. अनागामी मार्ग प्राप्त ६. अनागामी फल प्राप्त ७. अर्हत् मार्ग प्राप्त ८. अर्हत्फल प्राप्त ।

मंगल - परिच्छेद

महामंगल - सुत्त

एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा सावित्थियं विहरति जेतवने अनाथ-पिण्डिकस्स आरामे । अथ खो अञ्ञतरा देवता अभिक्कन्ताय रत्तिया अभि-क्कन्तवण्णा केवलकप्पं जेतवनं ओभासेत्वा येन भगवा तेनुपसङ्कमि उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठासि । एकमन्तं ठिता खो सा देवता भगवन्तं गाथाय अज्झभासि:-

बहु देवा मनुस्सा च मङ्गलानि अचिन्तयुं ।
आकङ्खमाना सोत्थानं ब्रू हि मङ्गलमुत्तमं ॥१ ॥
असेवना च बालानं पण्डितानञ्च सेवना ।
पूजा च पूजनीयानं एतं मङ्गलमुत्तमं ॥२ ॥
पतिरूप देसवासो च पुब्बे च कतपुञ्ञता ।
अत्तसम्मापणिधि च एतं मङ्गलमुत्तमं ॥३ ॥
बाहुसच्चं च सिप्पंच विनयो च सुसिक्खितो ।
सुभासिता च या वाचा एतं मङ्गलमुत्तमं ॥४ ॥
माता-पितु उपट्ठानं पुत्तदारस्स सङ्गहो ।
अनाकुला च कम्मन्ता एतं मङ्गलमुत्तमं ॥५ ॥

महामंगल - सूत्र

ऐसा मैंने सुना । एक समय भगवान श्रावस्ती में अनाथपिण्डक के जेतवनाराम में विहार करते थे । उस समय एक देव रात्रि बीतने पर अपनी दीप्ति से समस्त जेतवन को आलोकित करते हुए जहाँ भगवान थे वहां आया, आकर भगवान को अभिवदन कर एक ओर खड़ा हो गया । एक ओर खड़े हो वह गाथा में भगवान से बोला :-

मंगल की इच्छा करते हुए बहुत से देव एवं मनुष्यों ने मंगल कार्यो पर विचार किया है । आप बतावें कि उत्तम मंगल कार्य क्या हैं ॥१ ॥

(तथागत ने कहा) - मूर्खों की संगत नहीं करना, विद्वानों की संगत करना एवं पूज्यों की पूजा करना, यह उत्तम मंगल हैं ॥२ ॥

उचित स्थान पर निवास करना, पुण्य कार्यो का संचय करना तथा सम्यक् आत्म निरीक्षण यह उत्तम मंगल हैं ॥३ ॥

बहुश्रुत होना, शिल्पादि कलाएँ सीखना, शिष्ट व्यवहार होना, श्रेष्ठ शिक्षा लेना, सुभाषित युक्त वाणी होना यह उत्तम मंगल हैं ॥४ ॥

माता-पिता की सेवा करना, बच्चों व पत्नी का पालन-पोषण करना, कोई गलत कार्य न करना यह उत्तम मंगल है ॥५ ॥

दानञ्च धम्मचरिया च ञातकानं च सङ्गहो ।
अनवज्जानि कम्मानि एतं मङ्गलमुत्तमं ॥६ ॥
आरति विरति पापा मज्जपाना च सञ्ञमो ।
अप्पमादो च धम्मेसु एतं मङ्गलमुत्तमं ॥७ ॥
गारवो च निवातो च सन्तुट्ठी च कतञ्ञुता ।
कालेन धम्मसवणं एतं मङ्गलमुत्तमं ॥८ ॥
खन्ती च सोवचस्सता समणानं च दस्सनं ।
कालेन धम्मसाकच्छा एतं मङ्गलमुत्तमं ॥९ ॥
तपो च ब्रह्मचरिया च अरियसच्चान दस्सनं ।
निब्बान सच्छिकिरिया च एतं मङ्गलमुत्तमं ॥१० ॥
फुट्ठस्स लोकधम्मेहि चित्तं यस्स न कम्पति
असोकं विरजं खेमं एतं मङ्गलमुत्तमं ॥११ ॥
एतादिसानि कत्वान सब्बत्थं अपराजिता
सब्बत्थ सोत्थिं गच्छान्ति तं तेसं मङ्गलमुत्तम ' न्ति ॥१२ ॥

दान देना, धर्म का आचरण करना, बन्धु-बान्धवों का आदर- सत्कार, दोष रहित कार्य करना यह उत्तम मंगल है ॥६ ॥

तन-मन व वाणी के पापों को त्यागना, मद्यपान न करना, आलस्य रहित हो धार्मिक कार्यों पर तत्पर रहना यह उत्तम मंगल है ॥७ ॥

प्रतिष्ठा पाना, विनम्र होना, सन्तुष्ठ रहना, कृतज्ञ होना एवं उचित समय पर धर्म सुनना यह उत्तम मंगल है ॥८ ॥

क्षमा शील होना, आज्ञाकारी होना, श्रमणों के दर्शन करना व उचित समय पर धर्म चर्चा करना, यह उत्तम मंगल है ॥९ ॥

तप, ब्रह्मचर्य का पालन, चार आर्य सत्यों का दर्शन और निर्वाण का साक्षात्कार करना, यह उत्तम मंगल है ॥१० ॥

जिसका चित्त प्रचलित लोक धर्म [१] से विचलित नहीं होता वह शोकरहित, निर्मल एवं निर्भय रहता है यह उत्तम मंगल हैं ॥

इस प्रकार के कार्य करके सर्वत्र अपराजित हो लोग कल्याण प्राप्त करते हैं यह उनके (देव व मनुष्यों के) लिए उत्तम मंगल है ॥१२ ॥

---

* लाभ तथा हानी, यश तथा अपयश, निंदा तथा स्तुति, सुख तथा दुःख, यह आठ लोक स्वभाव (लोकधर्म) हैं ।

करणीयमेत्त - सुत्त

करणीयमत्थ कुसलेन, यन्तं सन्तं पदं अभिसमेच्च ।
सक्को उजू च सूजू च, सुवचो चऽस्स मुदु अनतिमानी ॥१ ॥
सन्तुस्सको च सुभरो च, अप्पकिच्चो च सल्लहुकवुत्ति ।
सन्तिन्द्रियो च निपको च, अप्पगब्भो कुलेसु अननुगिद्धो ॥२ ॥
न च खुद्दं समाचरे किञ्चि, येन विञ्ञू परें उपवदेय्युं ।
सुखिनो वा खेमिनो होन्तु, सब्बे सत्ता भवन्तु सुखितऽत्ता ॥३ ॥
ये केचि पाणभूतत्थि, तसा वा थावरा वा अनवसेसा ।
दीघा वा ये महन्ता वा, मज्झिमा रस्सकाऽणुकथूला ॥४ ॥
दिट्ठा वा ये वा अदिट्ठा, ये च दूरे वसन्ति अविदूरे ।
भूता वा सम्भवेसी वा, सब्बे सत्ता भवन्तु सुखितऽत्ता ॥५ ॥
न परो परं निकुब्बेथ, नातिमञ्ञे थ कत्थचि नं किञ्चि ।
ब्यारोसना पटिघसञ्ञा, नाञ्ञमञ्ञस्स दुक्खमिच्छेय्य ॥६ ॥

करणीयमेत्त - सूत्र

शान्त पद (निर्वाण) प्राप्त करना चाहने वाले, कल्याण-साधन में निपुण व्यक्ति को चाहिये कि वह योग्य, सरल व अत्यन्त सरल बनें। उसकी बात सुन्दर, मधुर और विनीत हो ॥१॥

वह सन्तोषी हो, सहज ही पोष्य हो और सादा जीवन व्यतीत करने वाला हो। उसकी इन्द्रियाँ शान्त हों, वह चतुर हो, अल्प भाषी हो और कुलों में आसक्ति रहित हो ॥२॥

ऐसा कोई भी छोटा कार्य न करें जिसके लिए दूसरे जानकार लोग उसे दोष दें और इस प्रकार मैत्री करें कि सभी प्राणी सुखी हों, क्षेमी हों और अत्यन्त सुखी हों ॥३॥

ये जो जंगम या स्थावर, दीर्घ या महान्, मध्यम या ह्रस्व, अणु वा स्थूल, दिखाई देने वाले, पास के व दूर के, उत्पन्न या भविष्य में उत्पन्न होने वाले जितने भी प्राणी हैं, वे सभी सुखपूर्वक रहें ॥४-५॥

एक दूसरे की बुराई (वंचना) न करें। कभी किसी का अपमान न करें। वैमनस्य और विरोध के कारण भी एक दूसरे के दुःख की इच्छा न करें ॥६॥

माता यथा नियं पुत्तं, आयुसा एकपुत्त मनुरक्खे ।
एवम्पि सब्ब-भुतेसु, मानसं भावये अपरिमाणं ॥७ ॥
मेत्तञ्च सब्ब-लोकस्मिं, मानसं भावये अपरिमाणं ।
उद्धं अधो च तिरियञ्च, असम्बाधं अवेरं असपत्तं ॥८ ॥
तिट्ठं चरं निसिन्नो वा, सयानो वा यावतस्स बिगतमिद्धो ।
एतं सतिं अधिट्ठेय्य, ब्रह्ममेतं विहारं इधमाहु ॥६ ॥
दिट्ठिं च अनुपगम्म, सीलवा दस्सनेन सम्पन्नो ।
कामेसु विनेय्य गेधं, न हि जातु गब्भ सेय्यं पुनरेती ' ति ॥१० ॥

जिस प्रकार माता अपनी जान की परवाह न करके भी अपने इकलौते पुत्र की रक्षा करती है, उसी प्रकार सभी प्राणियों के प्रति अपार प्रेम-भाव बढावें ॥७ ॥

बिना बाधा, बिना वैर व शत्रुता के ऊपर-नीचे, आडे-तिरछे, सारे संसार के प्रति असीम प्रेम-भाव व मैत्री बढावें ॥८ ॥

खडे हुए, चलते हुए, बैठे, लेटे अथवा जब तक जागते रहें तब तक इसी प्रकार मैत्री-भाव स्मृति बनाये रक्खें, इसी को मैत्री ब्रह्म-विहार कहते हैं ॥९ ॥

ऐसा करने वाला नर कभी मिथ्या दृष्टि में न पड़कर, शीलवान हो, विशुद्ध-दर्शन से युक्त हो, काम-तृष्णा का नाश कर पुन: जन्म से मुक्त हो जाता है ॥१० ॥

रतन सुत्त

यानीध भूतानि समागतानि, भुम्मानि वा यानि व अन्तळिक्खे ।

सब्बे' व भूता सुमना भवन्तु, अथो 'पि सक्कच्च सुणन्तु भासितं ॥१ ॥

तस्मा हि भूता निसामेथ सब्बे, मेत्तं करोथ मानुसिया पजाय ।

दिवा च रत्तो च हरन्ति ये वलिं, तस्मा हि ने रक्खथ अप्पमत्ता ॥२ ॥

यं किञ्चि वित्तं इध वा हुरं वा, सग्गेसु वा यं रतनं पणीतं ।

न नो समं अत्थि तथागतेन, इदम्पि बुद्धे रतनं पणीतं ।

एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥३ ॥

खयं विरागं अमतं पणीतं, यदज्झगा सक्यमुनी समाहितो ।

न तेन धम्मेन समत्थि किञ्चि, इदम्पि धम्मे रतनं पणीतं

एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥४ ॥

रतन सूत्र

(इस सुत्त की देशना भगवान् ने वैशाली में की थी जब कि वैशाली की जनता दुर्भिक्ष, रोग और अमनुष्यों से पीड़ित थी । इसमें बुद्ध, धर्म और संघ के गुण वर्णित हैं ।)

इस प्रकार पृथ्वी पर या आकाश में जितने भी प्राणी उपस्थित हैं, वे सभी प्रसन्न हों और हमारे इस कथन को आदरपूर्वक सुनें ॥१ ॥

इसलिए सभी प्राणी सुनें । मनुष्य मात्र के प्रति मैत्री करें, ज्यो कि वें दिन-रात उनका प्रतिपालन करते हैं, और इसलिए अप्रमत्त होकर उनकी रक्षा करें ॥२ ॥

इस लोक या परलोक में जो भी धन है अथवा स्वर्गो में जों उत्तम रत्न है, उनमें से कोई भी बुद्ध के समान (श्रेष्ठ) नही ं है; यह भी बुद्ध में उत्तम रत्न है - इस सत्य वचन से कल्याण हो ॥३ ॥

जिस उत्तम अमृत, विराग(-पद) और सभी दोषों के नाशक निर्वाण को एकाग्र होकर शाक्यमुनि ने प्राप्त किया, उस धर्म के समान दूसरा कुछ श्रेष्ठ नहीं है । यह भी धर्म में उत्तम रत्न है - इस सत्यवचन से कल्याण हो ॥४ ॥

यं बुद्धसेट्ठो परिवण्णयी सुचिं, समाधिमानन्तरिकञ्ञमाहु ।
समाधिना तेन समो न विज्जति, इदम्पि धम्मे रतनं पणीतं ।
एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥५ ॥
ये पुग्गला अट्ठ सतं पसत्था, चत्तारि एतानि युगानि होन्ति ।
ते दक्खिणेय्या सुगतस्स सावका, एतेसु दिन्नानि महप्फलानि ।
इदम्पि संघे रतनं पणीतं, एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥६ ॥
ये सुप्पयुत्ता मनसा दळ्हेन, निक्कामिनो गोतमसासनम्हि ।
ते पत्तिपत्ता अमतं विगय्ह, लद्धा मुधा निब्बुतिं भुञ्जमाना ।
इदम्पि संघे रतनं पणीतं, एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥७ ॥
यथिन्दखीलो पठविं सितो सिया, चतुब्भि वातेहि
असम्पकम्पियो ।
तथूपमं सुप्परिसं वदामि, यो अरियसच्चानि अवेच्च पस्सति ।
इदम्पि संघे रतनं पणीतं, एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥८ ॥
ये अरियसच्चानि विभावयन्ति, गम्भीरपञ्ञेन सुदेसितानि ।
किञ्चापि ते होन्ति भुसप्पमत्ता, न ते भवं अट्ठमं आदियन्ति ।
इदम्पि संघे रतनं पणीतं, एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥९ ॥

परम श्रेष्ठ भगवान् बुद्ध ने जिस पवित्र समाधि का तत्काल फलदायी बतलाया, उस समाधि के समान दूसरा कुछ श्रेष्ठ नहीं है। यह भी धर्म में उत्तम रत्न है - इस सत्यवचन से कल्याण हो ॥५॥

जो बुद्धों द्वारा प्रशंसित आठ प्रकार के व्यक्ति हैं, इनके चार जोडे होते हैं, वे बुद्ध के शिष्य दक्षिणा देने के योग्य हैं, इन्हें दान देने में महाफल होता है। यह भी संघ में उत्तम रत्न है - इस सत्यवचन से कल्याण हो ॥६॥

जो गौतम बुद्ध के शासन में तृष्णा-रहित हो दृढमन से संलग्न है, वे प्राप्तव्य को प्राप्तकर अमृत में पैठ श्रेष्ठत्व को पा विमुक्ति-रस का आस्वादन करते हैं। यह भी संघ में उत्तम रत्न है - इस सत्यवचन से कल्याण हो ॥७॥

जैसे भूमि में गडी इन्द्रकील चारों ओर की हवा से भी कँपती नहीं है, वैसे ही मैं सत्पुरूष को कहता हूँ, जो कि आर्यसत्यों को भली प्रकार ज्ञानपूर्वक दर्शन करता है। यह भी संघ में उत्तम रत्न है - इस सत्यवचन से कल्याण हो ॥८॥

जो गम्भीर प्रज्ञा वाले बुद्ध द्वारा उपदिष्ट आर्यसत्यों का मनन करते हैं वे चाहे भले ही एकदम प्रमाद में पड़े हुए हों, किन्तु आठवाँ जन्म ग्रहण

सहावऽस्स दस्सनसम्पदाय, तयस्सु धम्मा जहिता भवन्ति ।
सक्कायदिट्ठि विचिकिच्छितं च, सीलब्बतं वा' पि यदत्थि किञ्चि ॥१० ॥
चतूहपायेहि च विप्पमुत्तो, छ चाभिठानानि अभब्बो कातुं ।
इदम्पि संघे रतनं पणीतं, एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥११ ॥
किञ्चापि सो कम्मं करोति पापकं कायेन वाचा उद चेतसा वा ।
अभब्बो सो तस्स पटिच्छादाय, अभब्बता दिट्ठपदस्स वुत्ता ।
इदम्पि संघे रतनं पणीतं, एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥१२ ॥
वनप्पगुम्बे यथा फुस्सितग्गे, गिम्हानमासे पठमस्मिं गिम्हे ।
तथूपमं धम्मवरं अदेसयि, निब्बाणगामिं परमं हिताय ।
इदम्पि बुद्धे रतनं पणीतं, एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥१३ ॥

नहीं करते । यह भी संघ में उत्तम रत्न है - इस सत्यवचन से कल्याण हो ॥९ ॥

दर्शन-प्राप्ति के साथ ही साथ उसके तीन बन्धन छूट जाते हैं- सत्काय-दृष्टि, विचिकित्सा, शीलव्रत परामर्श अथवा अन्य जो कुछ भी बन्धन हों । वह चार अपायों से मुक्त हो जाता है । छः घोर पाप-कर्मों का कभी आचरण नहीं करता । यह भी संघ में उत्तम रत्न है - इस सत्यवचन से कल्याण हो ॥१० ॥

भले ही वह शरीर, वचन अथवा मन से पाप-कर्म करता है, किन्तु वह उसे कभी छिपा नहीं सकता, क्योंकि निर्वाणदर्शी को छिपाने में असमर्थ कहा गया है ।यह भी संघ में उत्तम रत्न है - इस सत्यवचन से कल्याण हो ॥११ ॥

जैसे वसन्त ऋतु के प्रारम्भ में वन और झाडियाँ पुष्पित हो उठती हैं, वैसे ही श्रेष्ठ धर्म का उपदेश भगवान बुद्ध ने दिया, जो निर्वाण की ओर ले जाने वाला तथा परम हितकारी है ।यह भी बुद्ध में उत्तम रत्न है - इस सत्यवंचन से कल्याण हो ॥१२ ॥

श्रेष्ठ निर्वाण के दाता, श्रेष्ठ धर्म के ज्ञाता, श्रेष्ठ मार्ग के निर्देशक, श्रेष्ठ लोकोत्तर बुद्ध ने उत्तम धर्म का उपदेश दिया है ।यह भी बुद्ध में

वरो वरञ्ञू वरदो वराहरो, अनुत्तरो धम्मवरं अदेसयि ।
इदम्पि बुद्धे रतनं पणीतं, एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥१४ ॥
खीणं पुराणं नवं नत्थि सम्भवं, विरत्तचित्ता आयतिके भवस्मिं ।
ते खीणबीजा अविरूळ्हिछन्दा, निब्बन्ति धीरा यथायम्पदीपो ।
इदम्पि संघे रतनं पणीतं, एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥१५ ॥
यानीध भूतानि समागतानि, भुम्मानि वा यानि व अन्तळिक्खे ।
तथागतं देवमनुस्सपूजितं, बुद्धं नमस्साम सुवत्थि होतु ॥१६ ॥
यानीध भूतानि समागतानि, भुम्मानि वा यानि व अन्तळिक्खे ।
तथागतं देवमनुस्सपूजितं, धम्मं नमस्साम सुवत्थि होतु ॥१७ ॥
यानीध भूतानि सभागतानि, भुम्मानि वा यानि व अन्तळिक्खे ।
तथागतं देवमनुस्सपूजितं, संघं नमस्साम सुवत्थि होतु ॥१८ ॥

उत्तम रत्न है - इस सत्यवचन से कल्याण हो ॥१३ ॥

सारा पुराना कर्म क्षीण हो गया, नया उत्पन्न नहीं होता, उनका चित्त पुनर्जन्म से विरक्त हो गया है, वे क्षीण-बीज हो गए हैं, उनकी तृष्णा समाप्त हो गई है, वे इस प्रदीप के समान निर्वाण को प्राप्त हो जाते हैं ।यह भी संघ में उत्तम रत्न है - इस सत्यवचन से कल्याण हो ॥१४ ॥

इस समय इस पृथ्वी पर या आकाश में जितने भी प्राणी उपस्थित हैं,तथागत उन सभी देव और मनुष्यों से पूजित हैं, हम बुद्ध को नमस्कार करते हैं, कल्याण हो ॥१५ ॥

इस समय इस पृथ्वी पर या आकाश में जितने भी प्राणी उपस्थित हैं,तथागत उन सभी देव और मनुष्यों से पूजित हैं, हम धर्म को नमस्कार करते हैं, कल्याण हो ॥१६ ॥

इस समय इस पृथ्वी पर या आकाश में जितने भी प्राणी उपस्थित हैं,तथागत उन सभी देव और मनुष्यों से पूजित हैं, हम संघ को नमस्कार करते हैं, कल्याण हो ॥१७ ॥

- रतनसुत्त समाप्त ।

- जयमंगल अट्ठगाथा-

बाहुं सहस्समभिनिम्मित्सायुधन्तं,
गिरिमेखलं उदित-घोर-ससेन-मारं ।
दानादि धम्मविधिना जितवा मुनिन्दो,
तं तेजसा भवतु ते *जय मंगलानि ॥१ ॥
मारातिरेक मभियुज्झित सब्बरत्तिं
घोरम्पनालवक मक्खमथद्ध-यक्खं
खन्ती सुदन्त विधिना जितवा मुनिन्दो,
तं तेजसा भवतु ते जयमंगलानि ॥२ ॥
नालागिरिं गजवरं अतिमत्तभूतं,
दावग्गि चक्कमसनीव सुदारुणन्तं
मेतम्बुसेक विधिना जितवा मुनिन्दो
तं तेजसा भवतु ते जयमंगलानि ॥३ ॥
उक्खित्त खग्गमतिहत्थ सुदारुणन्तं,
धावन्ति योजनपथङ्गु' लिमालवन्तं
इद्धीभिसखंत मनो जितवा मुनिन्दो,
तं तेजसा भवतु ते जयमंगलानि ॥४ ॥
कत्वान कटठमुदरं इव गब्भिनीया,
चिञ्चाय दुट्ठ वचनं जनकाय मज्झे

जयमंगल अट्ठगाथा-

हजारों भुजाओं वाले, सुदृढ हथियारों को धारण किए, गिरिमेख़ला नामक हाथी पर चढे हुए, अत्यन्त भयानक, सेना सहित मार को जिन मुनीन्द्र (बुद्ध) ने अपने दान आदि धर्म के बल से जीत लिया, उन सम्यक् सम्बुद्ध के तेज से तेरा *जय हो, मंगल हो ॥१ ॥

मार के अतिरिक्त रात भर युद्ध करने वाले घोर दुर्द्धर्ष और कठोर हृदय वाले 'आलवक' यक्ष को, जिन मुनीन्द्र ने सहनशीलता व संयम बल से जीत लिया उन भगवान बुद्ध के तेज से तेरी जय हो, मंगल हो ॥२ ॥

दावानल अग्नि-चक्र और विद्युत की तीव्र ज्वाला के समान अत्यन्त दारूण तथा अत्यन्त मदमत्त नालागिरि गजराज को जिन मुनीन्द्र ने मैत्री रूपी जल वर्षा करके जीत लिया, उन भगवान बुद्ध के तेज से तेरी जय हो, मंगल हो ॥३ ॥

हाथ में तलवार लेकर योजनों तक दौडने वाले अत्यन्त भयानक अंगुलिमाल को जिन मुनीन्द्र ने अपनी ऋद्धि के बल से जीत लिया, उन भगवन बुद्ध के तेज से तेरी जय हो, मंगल हो ॥४ ॥

पेट से काठ बांध कर सभा के बीच गर्भिणी की तरह व्यवहार करने वाली 'चिञ्चा' के अपशब्दों को जिन मुनीन्द्र ने अपने शान्त व सोम्य बल से जीत लिया, उन भगवान बुद्ध के तेज से तेरी जय हो, मंगल हो ॥५ ॥

सन्तेन सोम विधिना जितवा मुनिन्दो,
तं तेजसा भवतु ते जयमंगलानि ॥५ ॥
सच्चं विहाय-मतिसच्चक वादकेतुं
वादाभिरोपितमनं अति अन्धभूतं
पञ्ञापदीप जलितो जितवा मुनिन्दो,
तं तेजसा भवतु ते जयमंगलानि ॥६ ॥
नन्दोपनन्द-भुजगं विवुधं महिद्धिं
पुत्तेन थेर भुजगेन दमापयन्तो
इद्धुपदेस विधिना जितवा मुनिन्दो,
तं तेजसा भवतु ते जयमंगलानि ॥७ ॥
दुग्गाहदिट्ठि भुजगेन सुदट्ठ हत्थं
ब्रह्मं विसुद्धि जुतिमिद्दि बकाभिधानं
ञाणागदेन विधाना जितवा मुनिन्दो,
तं तेजसा भवतु ते जयमंगलानि ॥८ ॥
एतापि बुद्ध जयमंगल अट्ठगाथा
यो वाचको दिनदिने सरते मतन्दि
हित्वाननेक विविधानिचुपद्दवानि,
मोक्खं सुखं अधिगमेय्य नरो सपञ्ञो ॥९ ॥

जयमङ्गल अट्ठगाथा निट्ठितं

सत्य को छोड कर असत्य के पोषक, अभिमानी, वाद-विवाद-परायण और अहंकार से अत्यन्त अन्धे हुए 'सच्चक' नामक परिव्राजक को जिन मुनीन्द्र ने प्रज्ञा-प्रदीप जला कर जीत लिया, उन भगवान बुद्ध के तेज से तेरी जय हो, मंगल हो ॥६ ॥

विविध प्रकार की महा ऋद्धियों से सम्पन्न 'नन्दोपनन्द' नामक भुजंग को जिन मुनीन्द्र ने अपने पुत्र (शिष्य) महामोद्गल्यायन स्थविर द्वारा अपनी ऋद्धि शक्ति एवं उपदेश बल से जीत लिया, उन भगवान बुद्ध के तेज से तेरी जय हो, मंगल हो ॥७ ॥

घोर मिथ्या दृष्टिरूपी सर्प द्वारा डसे गये विशुद्ध ज्योति और ऋद्धि शक्ति से युक्त 'बक' नामक ब्रह्मा को जिन मुनीन्द्र ने ज्ञान रूपी ओषधि देकर जीत लिया, उन भगवान बुद्ध के तेज से तेरी जय हो, मंगल हो ॥८ ॥

जो कोई पाठक बुद्ध की इन जय मंगल अट्ठ गाथाओं को निरालस भाव से प्रतिदिन पाठ करता है, वह बुद्धिमान व्यक्ति नाना प्रकार के उपद्रवों से मुक्त होकर निर्वाण सुख प्राप्त कर लेता है ॥९ ॥

जयमंगल अष्ठगाथा समाप्त ।

---

* नोट :- यह गाथा स्वयं के लिए कहते वक्त 'भवतु ते' के बदले 'भवतु मे' कहा जाता है ।

- सल्ल सुत्तं-

अनिमित्तमनञ्ञात, मच्चानं इध जीवितं ।
कसिरं च परित्तं च, तं च दुक्खेन संञ्ञुतं ॥१ ॥
न हि सो उपक्कमो अत्थि, येन जाता न मिय्यरे ।
जरऽम्पि पत्वा मरणं, एवं धम्मा हि पाणिनो ॥२ ॥
फलानमिव पक्कानं, पातो पततो भयं ।
एवं जातानं मच्चानं, निच्चं मरणतो भयं ॥३ ॥
यथा'पि कुम्भकारस्स, कता मत्तिकभाजना ।
सब्बे भेदनपरियन्ता, एवं मच्चान जीवितं ॥४ ॥
दहरा च महन्ता च, ये बाला ये च पण्डिता ।
सब्बे मच्चुवसं यन्ति, सब्बे मच्चुपरायणा ॥५ ॥
तेसं मच्चुपरेतानं, गच्छत परलोकतो ।
न पिता तायते पुत्तं, ञाति वा पन ञातके ॥६ ॥
पेक्खतं येव ञातीनं पस्स लालपतं पुथु ।
एवमेको व मच्चानं, गोवज्झो विय निय्यति ॥७ ॥

सल्लसूत्र

(जीवन की अनित्यता । तृष्णा के प्रहाण और मुक्ति का मार्ग ।)

यहाँ मनुष्यों का जीवन अनिमित्त और अज्ञात है, कठिन और अल्प है और वह भी दु:ख से युक्त है ॥१ ॥

ऐसा कोई उपक्रम नहीं है जिससे कि जन्मे हुये लोग न मरें । बुढापा प्राप्त करके भी मरना होता है । प्राणियों का ऐसा ही स्वभाव है ॥२ ॥

जैसे पके हुए फलों को प्रात: गिरने का भय होता है, वैसे ही जन्म लिए हुए प्राणियों को नित्य मृत्यु से भय लगा रहता है ॥३ ॥

जैसे कुम्हार द्वारा बनाये मिट्टी के बर्तन सभी टूट जाने वाले हैं, ऐसा हि प्राणियों का जीवन है ॥४ ॥

तरूण, बडे, बच्चे और बुद्धिमान् सभी मृत्यु के वश में चले जाते हैं । सभी मृत्यु को प्राप्त होने वाले हैं ॥५ ॥

उन मृत्यु के अधीन रहने वालों के परलोक जाते समय न तो पिता पुत्र की रक्षा करता है और न तो भाई-बन्धु भाई-बन्धुओं की ॥६ ॥

भाई-बन्धुओं के देखते हुए ही, नाना प्रकार के विलाप को देखते हुए भी मृत्यु अकेले ही प्राणियों को बध करने वाली गौ की भांति ले जाती है ॥७ ॥

एवमब्भाहतो लोको, मच्चुना च जराय च ।
तस्मा धीरा न सोचन्ति, विदित्वा लोकपरियायं ॥८ ॥
यस्स मग्गं न जानासि, आगतस्स गतस्स वा ।
उभो अन्ते असम्पस्सं, निरत्थं परिदेवसि ॥९ ॥
परिदेवयमानो चे, कञ्चिदत्थं उदब्बहे ।
सम्मूळ्हो हिंसमत्तानं, कयिरा चेनं विचक्खणो ॥१० ॥
न हि रूण्णेन सोकेन, सन्तिं पप्पोति चेतसो ।
भिय्यस्सुप्पज्जते दुक्खं, सरीरं चुपहञ्ञति ॥११ ॥
किसो विवण्णो भवति, हिंसमत्तानमत्तना ।
न तेन पेता पालेन्ति, निरत्था परिदेवना ॥१२ ॥
सोकमप्पजहं जन्तु, भिय्यो दुक्खं निगच्छति ।
अनुत्थुनन्तो कालकतं सोकस्स वसमन्वगू ॥१३ ॥
अञ्ञा' पि पस्स गमिने, यथा कम्मूपगे नरे ।
मच्चुनो वसमागम्म, फन्दन्ते चिध पाणिनो ॥१४ ॥
येन येन हि पञ्ञन्ति, ततो तं होति अञ्ञथा ।
एतादिसो विनाभावो, पस्स लोकस्स परियायं ॥१५ ॥

इस प्रकार यह लोक मृत्यु और बुढापे से पीडित हैं; इसलिए धीर पुरूष संसार के स्वभाव को जानकर शोक नहीं करते हैं ॥८ ॥

जिसके आने और जाने के मार्ग को नहीं जानते हो, दोनों अन्तों को न देखते हुए व्यर्थ में विलाप कर रहे हो ॥९ ॥

यदि विलाप करते हुए कुछ भी अपना भला कर सके तो बुद्धिमान व्यक्ति भी अपने को पीडित करता हुआ वैसा करें ॥१० ॥

किन्तु रोने और शोक करने से चित्त को शान्ति नहीं प्राप्त होती, प्रत्युत अधिक दु:ख ही उत्पन्न होता है और शरीर पीडित होता है ॥११ ॥

अपने आपको पीडित करते हुए व्यक्ति कृश और कुरुप हो जाता है । उससे प्रेत्यों का पालन नहीं होता । विलाप करना निरर्थक है ॥१२ ॥

जो व्यक्ति शोक को नहीं छोडता है, वह अत्याधिक दु:ख को प्राप्त होता है, मरे हुए व्यक्ति के लिए पश्चाताप करते हुए शोक के ही वश में पड जाता है ॥१३ ॥

अपने कर्मानुसार अन्य भी मर कर जाने वाले मनुष्यों और मृत्यु के वश में पडकर यहाँ छटपटाते हुए प्राणियों को देखो ॥१४ ॥

मनुष्य जिस-जिस बात को अच्छा समझता है; वह उससे भिन्न हो जाती है । इस प्रकार के वियोग और लोक के स्वभाव को देखो ॥१५ ॥

अपि वस्ससतं जीवे, भिय्यो वा पन मानवो ।
ञातिसङ्घा विना होति, जहाति इध जीवितं ॥१६ ॥
तस्मा अरहतो सुत्वा, विनेय्य परिदेवितं ।
पेतं कलाकतं दिस्वा, न सो लब्भा मया इति ॥१७ ॥
यथा सरणमादित्तं, वारिना परिनिब्बये ।
एवम्पि धीरो सप्पञ्ञो, पण्डितो कुसलो नरो ।
खिप्पमुप्पतितं सोकं, वातो तूलं' व धंसये ॥१८ ॥
परिदेवं पजप्पं च, दोमनस्सं च अत्तनो ।
अत्तनो सुखमेसानो, अब्बहे सल्लमत्तनो ॥१९ ॥
अब्बूळ्हसल्लो असितो, सन्तिं पप्पुय्य चेतसो ।
सब्बसोकअतिक्कन्तो, असोको होति निब्बुतो' ति ॥२० ॥

यदि मनुष्य सौ वर्ष या उससे अधिक जीवित रहे तो भी वह भाई-बन्धुओं से अलग हो जाता है , और यहाँ जीवन को छोड देता है ॥१६ ॥

इसलिए अर्हत् के उपदेश को सुनकर विलाप करना छोड मरे हुए प्रेत्य व्यक्ति को देखकर सोचे कि अब वह मुझे फिर नहीं मिल सकता ॥१७ ॥

जिस प्रकार आग लगे घर को पानी से बुझाये, ऐसे ही धीर, प्रज्ञावान् बुद्धिमान और कुशल नर उत्पन्न शोक को शीघ्र ही उसी तरह नष्ट कर देता है जैसे कि वायु रूई को उड़ा ले जाय ॥१८ ॥

अपना सुख चाहने वाला मनुष्य शल्य रूपी रोना, विलाप करना और मानसिक दुःख को निकाल दे ॥१९ ॥

जो शल्य रहित है, अनासक्त है और चित्त-शान्ति को प्राप्त है, वह सब शोक से परे हो, शोक-रहित हो शान्त होता है ॥२० ॥

धम्मपालन गाथा

सब्ब पापस्स अकरणं, कुसलस्स उपसंपदा ।
सचित्तपरियोदपनं, एतं बुद्धान सासनं ॥१ ॥
धम्मं चरे सुचरितं, न तं दुच्चरितं चरे
धम्मचारी सुखं सेति, अस्मिं लोके परम्हिच ॥२ ॥
न तावता धम्मधरो, यावता बहु भासतिं ।
यो च अप्पम्पि सुत्वान, धम्मं कायेन पस्सति ।
स वे धम्मधरो होति, यों धम्मं नप्पमज्जति ॥३ ॥
नत्थि मे सरणं अञ्ञं, बुद्धो मे सरणं वरं ।
एतेन सच्चवज्जेन होतु मे जयमङ्गलं ॥४ ॥
नत्थि मे सरणं अञ्ञं, धम्मो मे सरणं वरं ।
एतेन सच्चवज्जेन होतु मे जयमङ्गलं ॥५ ॥
नत्थि मे सरणं अञ्ञं, संघो मे सरणं वरं ।
एतेन सच्चवज्जेन होतु मे जयमङ्गलं ॥६ ॥
नमों बुध्दाय
नमो धम्माय
नमो संघाय
साधु, साऽधु, साऽधु

धम्म पालन गाथा

सभी पापों का न करना, कुशल कर्मो का करना
तथा स्वयं के (अपने) मन (चित्त)
की परिशुध्दि करना, यही बुध्द की शिक्षा है ॥१ ॥
सुचरित धर्म का आचरण करें, दुराचार न करें ।
धम्मचारी इस लोक और पर लोक दोनो जगह सुख
पूर्वक सोता है ॥२ ॥
बहुत बोलने से (कोई) धर्मधर नहीं होता, प्रत्युत जो थोडा भी सुन कर धर्म को काय (शरीर) से साक्षात करता है और जो धर्म से असावधानी (प्रमाद) नहीं करता, वही धर्मधर होता है ॥३ ॥
मेरी अन्य कोई शरण नहीं है, केवल बुध्द ही उत्तम शरण है । इस सत्य वचन से मेरी जय और मंगल हो ॥४ ॥
मेरी अन्य कोई शरण नहीं है, केवल धर्म ही उत्तम शरण है । इस सत्य वचन से मेरी जय और मंगल हो ॥५ ॥
मेरी अन्य कोई शरण नहीं है, केवल संघ ही उत्तम शरण है । इस सत्य वचन से मेरी जय और मंगल हो ॥६ ॥

शुभेच्छा

इच्छितं पत्थितं तुय्हं खिप्पमेव समिज्झतु
सब्बे पूरेन्तु चित्तसंकप्पा चन्दो पन्नरसो यथा ॥१ ॥
अभिवादनसीलिस्स निच्चं वुड्ढापचायिनो
चत्तारो धम्मा वडढन्ति आयु वण्णों सुखंऽ बलंऽऽ ॥२ ॥
सब्बीतियो विवज्जन्तु सब्ब रोगो विनस्सतु
मा ते भवत्वन्तरायो सुखी दीघायुको भव ॥३ ॥
भवतु सब्ब मङ्गलं, रक्खन्तु सब्ब देवता ।
सब्ब बुद्धानुभावेन, सदा सोत्थि भवन्तुते ॥४ ॥
भवतु सब्ब मङ्गलं रक्खन्तु सब्ब देवता ।
सब्ब धम्मानुभावेन, सदा सोत्थि भवन्तु ते ॥५ ॥
भवन्तु सब्ब मंङ्गलम, रक्खन्तु सब्ब देवता ।
सब्ब संधानु भावेन, सदा सांत्थि भवन्तु ते ॥६ ॥

शुभेच्छा

तुम्हारी चाही हुई व मांगी गई सभी वस्तुएं तुम्हे शीघ्र प्राप्त हो । तुम्हारे चित्त के सभी संकल्प पुर्णिमा के चन्द्रमा के समान पुरे हों ॥१ ॥

जो अभिवादन शील है, जो सदा वृध्दों की सेवा करनेवाला है, उसकी चार बाते बढती है - आयु, वर्ण, सुख और बल ॥२ ॥सभी अतियों से आप विरहित हो, आपके सभी रोग नष्ट हो बाधाओं से अन्तराय हो । आप सुखी और दिर्घायु बनें ॥३ ॥

आपका सर्वमंगल हो, सभी देवता आपकी रक्षा करें । सभी बुद्ध की भावना कर के सर्व कल्याण को प्राप्त हो ॥४ ॥

आप का सर्वमंगल हो, सभी देवता आपकी रक्षा करें । सभी धम्म की भावना कर के सर्व कल्याण को प्राप्त हो ॥५ ॥

आप का सर्वमंगल हो, सभी देवता आपकी रक्षा करे । सभी संघ की भावना करके सर्व कल्याण को प्राप्त हो ॥६ ॥

द्वितीय भाग : संस्कार परिच्छेद

(१) पूर्वकथन

बोधि प्राप्ति के उपरान्त जब सिध्दार्थ "बुद्ध" बन गये तो समस्त संस्कारों से विमुक्त हो गये और उपदेश व प्रवचन के द्वारा अपने स्वयं के द्वारा प्रतिपादित नवीन सत्य मार्ग (मध्यमार्ग) की उद्‌घोषणाओं द्वारा जनता में उसका प्रचार व प्रसार करने निकल पड़े । उस समय के समाज में वर्ण व्यवस्था और ऊँच-नीच एवम् संस्कारों के नाम पर जानवरों के बलिदानों से परिपूर्ण यज्ञ एवम् अनेक कर्मकाण्ड दैनिक जीवन शैली के अभिन्न अंग थे । भगवान बुद्ध के नवीन क्रांतिकारी विचारों से प्रभावित होकर तत्कालीन समाज के सभी वर्णो और वर्गो से पुरूष व स्त्रियाँ उनके अनुयायी बनते गये और एक "संघ" बन गया । इस बौध्द संघ में भिक्षु-भिक्षुणियाँ सम्मिलित थे जिन्हे अपने स्वयं के लिए अनेक शीलों और नियमों का पालन करना पडता था ।इसी के साथ ही साथ संघ के अपने आध्यात्मिक कुल संस्कारों का भी अभिउदय हुआ जिनमें प्रब्रज्या, धम्मदीक्षा, सरणगमन, परिनिर्वाण संस्कार आदि-आदि सम्मिलित होते गये ।

कालन्तर में धीरे- धीरे जब बौध्द धर्म फैलता गया और एक बौध्द

समाज बनता गया तो सर्व साधारण परिवारों की दिनचर्या स्थल, काल और समय के अनुसार प्रभावित हुई और इस प्रकार बौध्द धर्म को मानने वाले भिन्न -भिन्न समाजों ने अपने स्वभाव के अनुसार बौध्द-संस्कारों का सृजन किया। समाज की एकता के लिए और समाज के एक सांस्कृतिक सूत्र में बान्धने के लिए सामाजिक व्यवस्था आवश्यक है, ताकि एक सदाचरण पर आधारित व्यक्ति-व्यक्ति एवम् परिवार-परिवार के आपसी सम्बन्ध स्थापित हो सके और व्यक्ति-विकास की स्वतन्त्रता कायम रहे।

उपरोक्त तत्थों को दृष्टिगत रखकर ही बौध्द धर्म के विद्वानों ने बौध्द समाज के लिए बौध्द संस्कारों का सृजन किया हैं। जैसे बच्चे के जन्म पर नामकरण, केस कप्पन(मुण्डन) धम्मदीक्षा, विवाह संस्कार, गृह प्रवेश, प्रबज्या एवम् दाहसंस्कार आदि। इन सब संस्कारों को कराने के लिए कोई भी भिक्षु, भिक्षुणी, धम्मचारी, धम्मचारिनी या संस्कारों का ज्ञाता कोई भी भद्र पुरुष-स्त्री योग्य होते हैं। बौध्द सामाजिक परम्परा के अनुसार इन्हें संम्पन्न करा सकते हैं।

बौध्द संस्कारों के विषय में यह विशेष ध्यान रखना आवश्यक है कि ये केवल कर्मकाण्ड तक ही सीमित न रहे और संस्कारों को ही

केवल धर्म न समझा जाय । बौध्द-दर्शन इन संस्कारों से अलग है और श्रध्दा के साथ संस्कारों को सम्पन्न करते हुए बौध्द दर्शन को समझना तथा उसके अनुसार जीवन व्यतीत करना अति आवश्यक है । अत: जीवन के दो अति आवश्यक पहलू श्रध्दानुसरीन एवम् धम्मानुसरीन हमारे समग्र एवम् सम्यक् विकास के लिए अपरिहार्य है ।

दूसरी विशेष बात यह है कि संस्कारों को सम्पन्न कराने वाला भद्र-व्यक्ति शीलवान हो तथा साफ सुथरे कपडे पहन कर आये, किसी भी प्रकार के लोभ, लालच, लालसा, घमण्ड और पण्डाशाही से अनासक्त रहकर पवित्र मन से संस्कार सम्पन्न कराये । बौध्द जगत मैं पूजनीय एवम् मान्यता प्राप्त सभी प्रतीकात्मक वस्तुओं को पूजा और संस्कार के अनुसार सजाए । लगभग सभी संस्कारों में भगवान बुध्द की प्रतिमा, पानी भरा हुआ कच्चा घडा (मटका), कच्चा सूत का डोरा, मोमबत्ती या दीपक, अगरबत्ती, फूल आदि आवश्यक हैं । मनुष्य का शरीर भी एक कच्चे मटके के समान क्षणभंगुर है । परन्तु उसका जीवन मटके में भरे शुध्द पानी के समान है ।कच्चा धागा जैसे जल्दी टूटता है वैसे ही हमारा शीलाचरण है जो तत्क्षण प्रभावित होता है । कच्चे धागे को जैसे संभाल संभाल कर सुलझाना या रखना पड़ता है, वैसे ही शील

की रक्षा करनी पड़ती है । शेष प्रतीकात्मक वस्तुओं की महीमा प्रथम भाग पूजा का महत्व में दर्शायी गई है ।संस्कारों को कराते समय भारतीय नवीन दीक्षित बौध्दों को बाबा साहेब द्वारा दी गई २२ प्रतिज्ञाओं का अतिक्रमण नहीं करना चाहिए ।

त्रैलोक्य बौध्द महासंघ सहायक गण ने मुख्यत: (१) नामकरण (२) धम्मदीक्षा (३) विवाह (४) अन्तिम-संस्कार (५) पुण्यानुमोदन (६) गृहप्रवेश (७) विहार-समर्पण, को ही बौध्द संस्कारों में सम्मिलित किया है ।

प्रब्रज्जा व उपसंपदा इस प्रकार के ऊच्च आध्यात्मिक संस्कारों को इस बौध्द वन्दना सुत्त-संग्रह में सम्मिलित नहीं किया गया है क्योंकि ये संस्कार भिक्षुओं द्वारा सम्पादित होते हैं और वे अपने - अपने विनय के अनुसार इन्हे देते हैं या कराते है । सर्वसाधारण समाज से इनका कोई सम्बन्ध नहीं है ।

नामकरण

सर्वप्रथम पूजा स्थान को उचित प्रकार से सजाएं और नामकरण संस्कार में सम्मिलित होने वाले श्रध्दालुओं तथा संस्कार-कर्ता को उचित स्थान पर बैठायें । फिर बच्चें को नये स्वच्छ कपडे पहनाएं और माँ-बाप भी स्वच्छ कपडे पहन कर बैठे । माँ बच्चे को अपनी गोद में लेकर बैठे । इस प्रकार पूजा स्थान के सम्मुख आगे माँ बाप को बैठना चाहिए और फिर श्रध्दालुओं को एवम् उपासकों को नामकरण संस्कार कर्ता प्रथम माँ-बाप को हाथ जोडकर और हाथ जुडवाकर नमस्कार बन्दन कराये और त्रिसरण पंचशील-विधायक पंचशील को ग्रहण कराये ।

फिर सभी मिलकर बुध्द पूजा, त्रिरत्न वन्दना करें ।यदि माता-पिता जानकर है तो उनकी रूचि का नाम लेकर अन्यथा उपस्थित समाज से बौध्द परम्परा के अनुसार पाँच नाम ग्रहण करके माता-पिता की सहमति से कोई एक नाम चुन लें । नाम चुनते समय यह ध्यान रखें कि नाम सार्थक हो और बौध्द परम्परा के अनुसार ही हो, ब्राह्मण परम्परा के अनुसार नाम नहीं चुनना चाहिए । इस प्रकार नाम चुनने और माता-पिता के स्वीकार करने पर स्वीकृत नाम को बच्चे के माता-पिता से प्रथम

तीन बार उच्चारण कराये। यथा 'हमारे इस बालक/बालिका का नाम -------- है'। तत्पश्चात संस्कार कर्ता स्वयं नाम का उच्चारण करके उपस्थित समाज के सम्मुख यह घोषणा करें कि आज से यह बालक/बालिका अमुक नाम से पुकारा जायेगा। सभी को साधू-साधू-साधू बोलकर बच्चे को आशिर्वाद देना चाहिए। अब विधिकर्ता शुभेच्छा गाथा कहते हुए बालक व उसकें अभिभावकों को परित्राण सूत्र बांधे ।

इसके उपरान्त समयानुसार प्रवचन करें और फिर महामंगल सुत्त तथा धम्मपालन गाथा बोलकर कार्यक्रम को समाप्त करना चाहिए।

विधिक्रम:- त्रिशरण, पंचशील, सकारात्मक पंचशील, बुध्द पूजा, त्रिरत्न वन्दना, शुभेच्छा, महामंगल सुत्त, धम्मपालन गाथा ।

नोट:- इस शुभ अवसर पर विशेष सामुहिक भोज की आवश्यकता नहीं है। केवल चाय-मिष्टान देना पर्याप्त हो सकता है।

धम्मदीक्षा समारोह

भगवान बुध्द की शिक्षा के अनुसार जब कोई व्यक्ति धर्म के अनुसार जीवन जीने का संकल्प करता है, अर्थात् सरन गमन करके पंचशील लेता है और उसके अनुसार अनुसरण करने का व्रत धारण करता है तब ही वह बौध्द बनता है ।

दिनांक २४ मई १९५५ को बम्बई के अपने एक भाषण में बाबा सहाब डा. अम्बेडकर ने कहा था "बौध्द धर्म में उपासक को दीक्षा नहीं दी जाती थी ।इसका समाज पर विपरित परिणाम होता था । इससे उपासक के मन की परिपूर्ण तैयारी नहीं होती थी । परन्तु मेरे धम्म में उपासक को धम्म दीक्षा दी जायेगी । इसके पहले धर्म दीक्षा पर मैं एक किताब लिखने वाला हूँ जिसे प्रत्येक व्यक्ति को खरीदना होगा और उस पुस्तक में निश्चित किए गये कुछ प्रश्नों के जबाब भी देने पड़ेगे ।तब ही उस व्यक्ति को बौध्द धम्म में प्रवेश मिलेगा । बौध्द धर्म में प्रवेश करने के लिये व्यक्ति को शुभ्र वस्त्रों का परिधान करना चाहिए" । इस कथन से धम्म दीक्षा का कितना महत्व है, यह प्रतीत होता है ।अर्थात धम्म दीक्षा समारोह एक महत्व पूर्ण संस्कार है । कोई भी व्यक्ति कभी भी जन्म से बौध्द नहीं बनता, केवल बौद्ध परिवार में जन्म हुआ इसलिए

उस बालक या बालिका को बौद्ध नहीं समझना चाहिए। अर्थात धम्म के अनुसार उनपर (बच्चोंपर) बौद्ध संस्कार अवश्य कराने चाहिए और समझदार होने पर योग्य अयोग्य का विचार करके उन्हे धम्मदीक्षा लेने के लिए तैयार करना चाहिए। इस प्रकार उनकी तैयारी करनी जरूरी है। जब बालक-बालिका समझदार हो जाये तब उनका धम्मदीक्षा समारोह अपने घर में या सार्वजनिक स्थल पर एवं विहार में आयोजित करना बहुत ही आवश्यक है। इन बातों का पालन हमें अपरिहार्य रूप से करना ही चाहिए। सर्व प्रथम धम्मदीक्षा ग्रहण करने वाले को बुद्ध, धम्म, संघ इन त्रिरत्नों का संक्षिप्त में परिचय कर लेना चाहिए और उनका आचरण क्या है? यह भी समझा देना चाहिए और उसके बाद धम्मदीक्षा ग्रहण करने का उसका संकल्प हुआ है या नहीं यह भी पूछ लेना चाहिए। तप्तश्चात कोई भी आचरणशील बौध्द गृहस्थ या धम्मचारी अथवा भिक्षु से धम्म दीक्षा समारोह करवाना चाहिए। यह निम्न प्रकार है।

दीक्षार्थी ने श्वेतवस्त्रों का परिधान करके अथवा नीली कमीज पहनकर सर्व प्रथम भगवान बुध्द व बाबा साहब डा. अम्बेडकर की प्रतिमाओं को फूल (या फूल की माला) मोमबत्ती और अगरबत्ती अर्पण

करनी चाहिए। और तीन बार वन्दन अथवा पंचांग प्रणाम करना चाहिए। इसके बाद धम्मदीक्षा के लिए तीन बार निम्न याचना (बिंनती) करनी चाहिए।

"अहं सिरिमान * तिसरणेनसह, पञ्चसीलं धम्मं याचामि।

अनुग्गहं कत्वा सीलं देथ मे सिरिमान ॥ दुतियम्पि - - - - - ततियम्पि - - - - ।"

अर्थात महोदय मुझे त्रिशरण पंचशील दीजिए ऐसी मैं आपसे बिनती करता हूँ और मुझ पर अनुकम्पा (अनुग्रह) करके मुझे शीलों का उपदेश दीजिए।

उसके बाद दीक्षा देने वाले को त्रिशरण पहले कहना चाहिए और दीक्षार्थी ने उसके पीछे- पीछे बोलना चाहिए। तत्पश्चात दीक्षा देने वाले के "तिसरण गमनं निट्ठितं" (अर्थात त्रिशरण गमन समाप्त) ऐसा कहना चाहिए। उनकी (दीक्षा देने वाले को) दीक्षार्थी को "आम् भन्ते" कहकर स्वीकृति देनी चाहिए। उसके बाद दीक्षा देने वाले आचार्य ने पंचशील प्रथम कहना चाहिए और दीक्षार्थी ने उसके पीछे-पीछे कहना चाहिए। उसके बाद आचार्य ने :-

---

* समारोह यदि भिक्षु के हाथों से कराया जाए तो 'अहं सिरिमान' के बदले 'अहं भन्ते' कहना चाहिए ।

इमानि पञ्चसिक्खापदानि, सीलेन सुगतिं यन्ति,
सीलेन भोगसम्पदा, सीलेन निब्बुतिंयन्ति,
तस्मा सीलं विसोऽधये ।

(अर्थात इस तरह यह पाँच शिक्षा पद हैं । यह शीलाचरण सुगति की तरफ ले जाने वाला है, यह शीलाचरण भौतिक सम्पदा की प्राप्ती के लिये उपयोगी है ।, यह शीलाचरण निर्वाण की तरफ ले जाने वाला है इसलिए अपना शीलाचरण शुध्द रखना चाहिए) इस तरह कहना चाहिए और दीक्षार्थी को "आम भन्ते" कह कर स्वीकृति देनी चाहिए । उसके बाद दीक्षार्थी से विधायक पंचशील और २२ प्रतिज्ञाओं को पढ़वा लेना चाहिए । अन्त मे आचार्य ने सभी की और से शुभेच्छा देनी चाहिए और धम्म पालन गाथा का पठ़न करके समारोह का समापन करना चाहिए ।

विधी क्रम - याचना, त्रिशरण- पंचशील, सकारात्मक पंचशील, २२ प्रतिज्ञायें, शुभेच्छा, धम्मपालन गाथा ।

विवाह - संस्कार

बौध्द धर्म में बेमेल विवाह, बालविवाह, कन्या - विवाह निषिद्ध हैं, परन्तु विधवा विवाह एवम् विधुर विवाह अमान्य नहीं हैं । विवाह एक सामाजिक आवश्यकता है क्योंकि सामाजिक गृहस्थ जीवन को अनुशासन बद्ध तरीके से चलाने के लिए स्त्री-पुरूष के आपसी सम्बन्ध इसी विवाह संस्कार अथवा विवाह करार से निश्चित होते हैं ।अत: स्त्री-पुरूष समाज रूपी गाड़ी के दो पहिए हैं और यदि इन दोनों पहियों में से कोई भी मान्यता प्राप्त सामाजिक रास्ते से विचलित होता है, या डगमगाता है तो पूरी सामाजिक व्यवस्था रूपी गाडी असंतुलित हो जाती है । इस तथ्य को दृष्टिगत रखकर विवाह हेतु सम्बन्ध स्थापित करते समय पूरी सावधानी रखनी चाहिए ।

बौध्द धर्म शीलों पर आधारित एक अनुशासन बध्द धर्म है जहाँ स्त्री-पुरूष दोनों समान एवम् स्वतंत्र हैं । अत: बौध्द समाज में विवाह कोई धार्मिक-संस्कार नहीं है और हिन्दु धर्म की तरह कन्यादान भी नहीं हैं । चूंकि बौध्द धर्म अनीश्वरवादी एवम् अनात्मवादी है और अवतारवाद से मुक्त है इसलिए गृह नक्षत्रों एवम् राशि मेल मिलाप के प्रसंग स्वत: ही अप्रासंगिक हो जाते हैं । अपितु बौध्द उपासकों को

अपने पुत्र-पुत्रियों के विवाह हेतु सम्बन्ध स्थापित करते समय दोनो पक्षों की यथा सम्भव सुविधाओं को ध्यान में रखना चाहिए ।

वरपक्ष और वधू पक्ष दोनों ही समान हैं । कोई बडा या छोटा नहीं हैं ।इसलिए 'वर' या 'वधू' के चयन हेतु दोनों में से किसी भी पक्ष का प्रस्ताव सम्मान सूचक है । प्रस्ताव रखने से पूर्व प्रस्ताविक वर एवम् वधू के व्यक्तिगत चरित्र की जाँच - पडताल करना अपेक्षित है । विवाह हेतू प्रस्ताव की स्वीकृति हो जाने पर विवाह की तिथि एवम् स्थान का चयन दोनों पक्ष मिलकर सुविधानुसार तय करें । इस कार्य में किसी योग्य बौध्दाचार्य या धम्माचारी या भिक्षू की सलाह भी ले सकते हैं ।

विवाह सम्बन्ध स्थापित करते समय अथवा विवाह सम्पन्न होते समय किसी भी प्रकार से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में दहेज का प्रश्न नहीं उठाना चाहिए। भौतिक चकाचौंध से दूर रहकर विवाह में अनावश्यक प्रदर्शन नहीं होने चाहिए। लेकिन साफ-सफाई के साथ-साथ विवाह दोनों पक्षों की खुशी का प्रतीक होना अपेक्षित है । अन्तरजातिय एवम् अन्तरप्रान्तीय विवाहों को प्रोत्साहन देना अपेक्षित है । नवीन बौध्द समाज को पूर्ववर्ती हिन्दु समाज के सभी पुरातन संस्कारों एवम् प्रथाओं का बहिष्कार करना चाहिए । विवाह की तिथि निश्चित हो जानें पर एक विशेष बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि

अगर वर एवं वधू पहले से बौद्ध न हो तो विवाह की तिथि से पूर्व ही किसी दिन उन्हें अलग - अलग सुविधानुसार बौध्द दीक्षा दे देनी चाहिए क्योंकि विवाह के दिन यह कार्य करना कठिन होता है और उस दिन अन्य बहुत से कार्य करने होते हैं तथा समयाभाव के कारण बौध्द दीक्षा अथवा सरण-गमन की महत्ता समझाना कठिन पडता है। विवाह संस्कार कन्यापक्ष के घर अथवा बौध्द बिहार अथवा अन्य उचित स्थान पर सम्पन्न कराया जा सकता है।

आवश्यक सामग्री :- जिस स्थान पर विवाह संस्कार सम्पन्न होना है उस स्थान की विशेष सफाई की जानी चाहिए। एक ऊंचा प्लेटफार्म बनाकर भगवान बुद्ध की प्रतिमा बहुत सुन्दर एवम् आकर्षक ढंग से सजानी चाहिए। यदि संभव हो तो बाबा साहेब डा. अम्बेडकर की एक प्रतिमा थोडे नीचे रखकर फूल माला पहना कर रखनी अपेक्षित है। पाँच मोमबत्ती, अगरबत्ती, पर्याप्तमात्रामें पुष्प, कच्चा धागा, एक कच्चा मटका, शुध्द पानी और पाँचरंग का अलग अलग कपडा, वर- वधू हेतु दो बडी फूल मालाएं लाकर रखनी चाहिए।

विवाह का समय :- दिन में प्रात:काल अथवा दोपहर परन्तु बारात को खाना खिलाने से पहले। यदि बारात दूर जानी है तो सुविधानुसार दिन में किसी भी समय।

विवाह विधि :- जो कोई भी योग्य या जानकार बौध्द उपासक, बौध्दाचार्य, धम्मचारी विवाह विधि सम्पन्न कराये उन्हे सबसे पहले वर-वधू को सफेद वस्त्रों में उचित स्थान पर बैठाना चाहिए और उसके अभिभावकों सहित दोनो पक्षों के उपासकों-उपासिकाओं को उचित व्यवस्था के साथ बैठाना चाहिए। फिर वर और वधू से धूपबत्ती, अगरबत्ती, मोमबत्ती जलाकर भगवान बुध्द की प्रतिमा को पुष्प अर्पित करायें और पंचांग प्रणाम करायें । फिर आगे की कार्यवाही की जाए । पहले वर-वधू के साथ विधिकर्ता त्रिसरण, पंचशील, सकारात्मक पंचशील और तत्पश्चात बुध्दपूजा व त्रिरत्न वन्दना करें ।

स्वीकृति विधि :- विधिकर्ता को चाहिए कि अब वर और वधू को खडे करके *वर का दाहिना हाथ सीधी अवस्था में रखकर तथा उसके ऊपर वधू (कन्या) का दाहिना हाथ पट अवस्था में रखकर वर-वधू के अभिभावकों की ओर से साक्ष समाज की उपस्थिति में यह घोषणा करे कि अमुक अमुक अपनी पुत्री आयुष्मति - - - - के अमुक अमुक के सुपुत्र आयुष्मान -- - - -को एक दुसरे के सुयोग्य पती-पत्नी के रुपमें स्वीकृती हैं और वर तथा उसके अभिभावक इसे सहर्ष स्वीकार करते हैं ।

कन्या द्वारा स्वीकृति- त्रिरत्न की पावन स्मृति के साथ उपस्थित समाज को साक्षी मानकर मैं श्री - - - - जी

या भारतीय समाज की विशेष परिस्थितियों के अनुसार यह संस्कार वर वधू को बैठाकर भी सम्पन्न कराया जा सकता है ।

को पती के रूप में स्वीकार करती हूँ तथा जीवनभर इनके साथ रहने की प्रतिज्ञा करती हूँ ।

वर द्वारा स्वीकृति - त्रिरत्न की पावन स्मृति के साथ उपस्थित समाज को साक्षी मानकर मैं श्रीमति - - - - जी को पत्नी के रूप में स्वीकार करके जीवनभर इनके साथ रहने की प्रतिज्ञा करता हूँ ।

इसके पश्चात वर - वधू के हाथों के ऊपर से शुध्द जल धीरेधीरे इस तरह डाला जाए कि वह हाथों के नीचे एक थाल में एकत्रित हो जाए ।जल डालते हुए विधिकर्ता निम्न शुभेच्छाओं का सस्वर पठन उच्च स्वर से करें ।

इच्छितं पत्थितं तुय्हं खिप्पमेव समिज्झतुं ।
सब्बे पुरेन्तु चितं संकप्पा चन्दो पन्नरसो यथा ॥१ ॥
अभिवादसीलिस्स निच्चं वड्ढापच्चायिनो
चत्तारो धम्मा वड्ढन्ति आयु वण्णों सुखं बलं ॥२ ॥
सब्बीतियो विवज्जन्तु, सब्ब रोगो विनस्सतु
मा ते भवत्वन्तरायो, सुखी दीघायुको भव ॥३ ॥
भवतु सब्ब मंगलं रखन्तु सब्ब देवता
सब्ब बुध्दानुभावेन सदा सोत्थि भवन्तु ते ॥४ ॥

भवतु सब्ब मंगलं रखन्तु सब्ब देवता
सब्ब धम्मानुभावेन सदा सोत्थि भवन्तु ते ॥५ ॥
भवतु सब्ब मंगलं रखन्तु सब्ब देवता
सब्ब संघानुभावेन सदा सोत्थि भवन्तु ते ॥६ ॥

इसके पश्चात वर-वधू के हाथों को अलग-अलग कर देना चाहिए और दोनों के हाथों में सूत्र बांधना चाहिए ।विधिकर्ता अब वर-वधू के कर्तव्य रूपी प्रतिज्ञाएं उनसे अलग अलग करायें ।

वर के कर्तव्य (प्रतिज्ञाएं) - उपस्थित समाज को साक्षी मानकर मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि :-

(१) तव सम्माननाय पटिजानामि - मैं आपका सम्मान करने की प्रतिज्ञा करता हूँ ।

(२) अनवमाननाय पटिजानामि - मैं आपका अपमान नहीं करने की प्रतिज्ञा करता हूँ ।

(३) अनति चरियाय पटिजानामि - मैं अनैतिक आचरण नहीं करने की प्रतिज्ञा करता हूँ ।

(४) इस्सरिय वोस्सगेन तव सत्तुट्ठि कातुम पटिजानामि - मैं आपको सम्यक् आजीविका द्वारा कमाये धन दौलत से सन्तुष्ट रखने की प्रतिज्ञा करता हूँ ।

(५) अलंकारानुप्पदानेन तव सत्तुट्ठि कातुम पटिजानामि - मैं अपको अलंकार आदि देकर सन्तुष्ट रखने की प्रतिज्ञा करता हूँ।

वधू के कर्तव्य (प्रतिज्ञाएं) - उपस्थित समाज को साक्षी मानकर मैं प्रतिज्ञा करती हूँ कि :-

(१) सुसंविहित कमन्ता भविस्सामि - मैं अपने घर के सभी कार्यों को भली प्रकार पूरा करने की प्रतिज्ञा करती हूँ ।

(२) संगहित परिजना भविस्सामि - मैं परिजन व परिवार के लोगों की भली भांति देख रेख करने की प्रतिज्ञा करती हूँ ।

(३) अनितिचारिणी भविस्सामि - मैं दुराचार से विरत रह कर अपने पति के विश्वास पात्र रहने की प्रतिज्ञा करती हूँ ।

(४) सम्भत अनुरक्खनं भविस्सामि - मैं आपके उपार्जित धन दौलत की रक्षा करने की प्रतिज्ञा करती हूँ ।

(५) दक्खा च अनलसा च सब्ब किच्चेसु भविस्सामि - मैं घर के सभी कार्यों मे दक्ष (निपुण) रहकर और आलस्य रहित रहने की प्रतिज्ञा करती हूँ ।

अब विधिकर्ता सभी उपस्थित समाज के सम्मुख महामंगलसुत्र का पठन अर्थ सहित करे ।प्रथम बार साधू कहने पर कन्या वर के गलें में

माला डालेगी, दूसरे साधू कहने पर वर कन्या के गले में माला पहनाऐगा और तीसरे साधू के साथ सभी उपस्थित समाज वर-वधू के ऊपर आशीर्वाद के पुष्पों की वर्षा करेंगे ।

इस प्रकार विवाह सम्पन्न माना जायेगा । अन्त में धम्मपालन गाथा कहकर विवाह विधि कार्यक्रम की समाप्ति की घोषणा करें ।

वर-वधू हाथ जोडकर सभी को नमस्कार, नमो बुध्दाय, जयभीम कहकर अपने उचित स्थान पर बैठ जाए ।

तत्पश्चात वर एवम् वधू दोनो पक्षों के सभी नरनारी सामुहिक जलपान अथवा भोजन करें

विधिक्रम :- त्रिशरण, पंचशील, सकारात्मक पंचशील, बुध्दपूजा, त्रिरत्न वन्दना, वधू-वर स्विकृती, वधु और वर के कर्तव्य, शुभेच्छा, महामंगलसुत्र, धम्मपालन गाथा ।

नोट - परिशिष्ट - २ का अवलोकन करे ।

दाहकम्म (दाहकर्म) अथवा अन्त्य विधी

जब कोई व्यक्ती मृत्यू के निकट होता है तो उसकी मानसीक शांति के लिए धार्मिक ग्रंथों से परित्राण पाठ तथा अनित्य पाठ सुनाते हैं । इस प्रकार पाठ सुनाते हुए और सुनते हुए मरने को शुभ समझा जाता है । अतः सुत्रपठण या धर्मग्रन्थ का पाठ करना चाहिए । मरणोपरान्त मृतक को स्नान करा करके और सुगन्ध लगाकर श्वेत कफन पहना कर अर्थी सजाए ।उपस्थित जनों में से कोई योग्य बौद्ध उपासक या किसी भिक्षु से त्रिसरण, पंचशील, सकारात्मक पंचशील ग्रहण करें, और विधिकर्ता मृतक के परिवार में से किसी को एक लोटा शुद्ध जल लाने को कहें और जल आने पर उसे एक वर्तन में धीरे धीरे नीचे धार बाँधकर उंडेले और इसी बीच विधिकर्ता तीन बार यह गाथा बोलता रहें-"इदं नो ञातीनं होन्तु, सुखिता होन्तु ञातञो" अर्थात यह पुण्य कर्म हमारे मृत व्यक्ति ने किया है हमारा मृत स्व बन्धू सुखी होवे ।

पुनः निम्न गाथाओं को बोलकर शोक संतप्त परिवार को शोक रहित रहने की भावना करे --

"अनिच्चा वत संखारा उप्पादवय धम्मिनो ।

उपज्जित्वा निरुज्झन्ति तेसं उपसमो सुखो ।

अर्थात - सभी संस्कार अनित्य हैं । उत्पन्न होकर नष्ट होना उनका स्वभाव है । उपन्न होकर वे शान्त हो जाते हैं ।उनका सर्वथा शांत होना परम सुख दायक है ।

'दुक्खपत्ता च निदुक्खा भयापत्ताच निब्भया ।

सोकप्पत्ता च निस्सोका होन्तु सब्बेपिपाणिणो ॥

अर्थात - सभी दुःख प्राप्त प्राणी दुःख रहित हो भय-प्राप्त, भय रहित हो और शोक प्राप्त, शोक रहित हो ।

तत्पश्चात मृतक की अर्थी को शान्त भावसे श्मशान भूमी ले जाये । लेकिन कहीं कहीं अर्थी के साथ जाते हुए त्रिशरण का उच्चारण करते हैं । ऐसा नहीं करना चाहिए, क्योंकि मरने के बाद कोई "शरण" नहीं जाता ।श्मशान भूमि में चित्ता बनाकर मृतक व्यक्ती को चित्तापर रखकर त्रिशरण, पंचशील, सकारात्मक पंचशील एवम् सल्लसुत्त का अर्थ सहीत पठन करें । उसके पश्चात चित्ता में आग लगाये इसके उपरान्त अनित्य पाठ पर थोडा प्रवचन करें और दो मीनट मौन रखकर मृतक व्यक्ती के प्रती सादर श्रद्धांजली अर्पित करें । अन्त में अनित्य पाठ का पठन करें - "अनिच्चा वत संखारा उप्पादवय धम्मिनो । उपज्जित्त्वा निरुज्झन्ति तेसं उपसमो सुखो ।"

अर्थ - सभी संस्कार अनित्य है, उत्पन्न होना और विनाश को प्राप्त

होना उनका धर्म है । वे उत्पन्न होकर निरोध को प्राप्त होते हैं, उनका शान्त होना ही सुख है ।

"चक्खु लोके' दुक्खसच्चं लाभो अलाभो ।

यसो अयसो निम्न पसंसा दुक्खं सुखं,

अनिच्चा अनत्ता विपरिणामाधम्मा ॥

अर्थ - 'चक्षु इन्द्रिय' दुःख सत्य है, लाभ-अलाभ, यश-अपयश, निन्दा प्रशंसा, दुःख सुख ये सब (आठ लोक धर्म) अनित्य अनात्म और विपरिणाम धर्म वाले हैं ।

पिय रूपं सात रुपं एत्थेसा तण्हा उपज्जीन्त ।

एत्थ नरुज्झमाना निरुज्झन्ति ॥

अर्थ - इससे प्रिय रूप सात (सुख) रुप तृष्णा मन में उत्पन्न होती है । इस तृष्णा का निरोध करने से निर्वाण होता है ।

इसके पश्चात मृत व्यक्ती के परिवार वालों को सांत्वना देनी चाहिए और उनकी यथा संभव सहायता करनी चाहिए ।

विधिक्रम: त्रिशरण पंचशील, सकारात्मक पचंशील, सल्लसुत, धम्मप्रवचन - आदरांजली,

पुण्यानुमोदन समारोह

परम्परा अनुसार यह संस्कार व्यक्ति की मृत्यू के बाद ७, १४, २१ इस तरह ७ के अनुपात में ४९ वे दिन तक किसी भी दिन किया जाता है ।

इस संस्कार के लिए पूजा स्थान सजा देने के बाद उसके ऊपर मृत व्यक्ति का फोटो रखना चाहिए । उसके बाद सामूहिक त्रिसरण पंचशील एवम् सकारात्मक पंचशील बोलना चाहिए । इसके उपरान्त विधि कर्ता ने बुद्ध पूजा, त्रिरत्न वंदना और सल्लसुत्त बोलना चाहिए । तदउपरान्त "उत्सर्गसुत्त" बोलना चाहिए और यथा शक्ती दान आदि करना चाहिए ।

"उन्नमे उदकं वट्टं यथा निन्नं पवत्तति ।
एवमेव, इतो दिन्नं पेतानं उपकप्पति ॥१ ॥
यथा वारिवहा पूरा परिपूरेन्ति सागरं
एवमेव इतो दिन्नं पेत्तानं उपकाप्पति ॥२ ॥
इच्छितं पत्थितं तुय्हं खिप्पमेव समिज्झतु ।
सब्बे पुरेन्तु चित्तसंकप्पा चन्दोपन्नरसो यथा ॥३ ॥
आयुरारोग्य सम्पत्ति सग्गसम्पतिमेवच
ततो निब्बानसम्पति, इमिना ते समिज्झतु ॥ ४ ॥

अर्थात - १) जिस प्रकार ऊंची जगहों से बहनेवाला पानी नीचे की

ओर जाता है, उसी प्रकार यहाँ पर जो कुछ दानादि पुण्य कर्म किया जाता है, वही मृत व्यक्ति के साथ जाता है ।

२. जिस प्रकार जल से भरी नदियाँ सागर को भर देती हैं उसी प्रकार यहाँ जो कुछ दानादि पुण्य कर्म किया जाता है वही मृत व्यक्ति के साथ जाता है ।

३. तुम्हारी इच्छित और प्रार्थित सब वस्तुए तुम्हे जल्दी ही प्राप्त हो । चित के संकल्प पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान पूर्ण हो ।

४. इन पुण्य कर्मों से तुम्हे (तुम्हारी) आयु, आरोग्य, और निर्वाण सुख मिले ।

उसके उपरान्त विधिकर्ता को मृत व्यक्ति के परिवार में से किसी के द्वारा लोटे से शुद्ध जल एक लोटे मे धीरे डालना चाहिए तथा जल डालते हुए यह बोलना चाहिए ।

"इदं नो ञातीनं होन्तु सुखिता होंतु ञातयों"

तत्पश्चात विधिकर्ता, आचार्य, धम्मचारी अथवा उपस्थित जनों में से किसी ने अनित्य, अनात्म एवम् दुःख विषयों पर संक्षिप्त प्रवचन देना चाहिए । अंत में धम्मपालन गाथा बोलना चाहिए ।विधिक्रम : त्रिसरण, पंचशील, सकारात्मक पंचशील, बुद्धपूजा, त्रिरत्न वन्दना, उत्सर्ग सुत्त, धम्म प्रवचन, आदरांजली, धम्मपालन गाथा ।

गृहप्रवेश

नवनिर्मित घर में अथवा एक घर छोडकर दूसरे घर में रहने के लिए जाने से पहले ग्रहप्रवेश का समारोह करना उचित है; परंतु अनिवार्य नहीं है ।

घर साफ सुथरा करके एक उचित स्थान पर पूजा स्थान बनाकर उसे अच्छी तरह सजाना चाहिए । (यह स्थान स्थाई रूप से भी बनाया जा सकता है) घर के सभी व्यक्तियों ने भी साफ सुथरे व धुले हुए कपडे पहनकर पूजा स्थान के सामने बैठना चाहिए। फिर विधीकर्ता को त्रिसरण, पंचशील, सकारात्मक पंचशील सामुहिक रुपसे तथा बुद्ध पूजा, त्रिरत्न वन्दना, रत्तन सुत्त, महामंगलसुत्त और करणीयमेत्तसुत्त बोलना चाहिए । अपने इस घर मे सभी को पंचशील का पालन करना चाहिए । मद्यपान, धुम्रपान, जुआ आदि अकुशल कृतियों से इस घर को मुक्त रखना चाहिए तथा नित्य घर की सफाई करते रहना चाहिए एवम् घर में शान्ति का वातावरण बनाये रखना चाहिए । घर के सभी जनों के सुखी एवम बच्चों के आरोग्य व शिक्षा की ओर ध्यान देना चाहिए । तथा अन्नादि पदार्थों को खराब होने से बचाना चाहिए आदि बातों पर धम्म प्रवचन देना अपेक्षित है । और इसी प्रकार "भगवान

बुद्ध और उनका धर्म" धम्मपद में से 'लोकवग्ग' एवम् 'शीलधम्म का स्वरूप' आदि में से योग्य प्रकार धम्म प्रवचन करना चाहिए । उसके बाद सभी को 'सब्बे सत्ता सुखी होन्तु' का जप शांत स्वभाव से करना चाहिए । समय का ध्यान रखकर अन्त में धम्मपालन गाथा कहकर कार्यक्रम समाप्त करना चाहिए ।

विधिक्रम : - त्रिसरण, पंचशील, सकारात्मक पंचशील, बुद्धपूजा, त्रिरत्न वंदना, रतनसुत्त, महामंगल सुत्त, करणीयमेत्तसुत्त, धम्मपालन गाथा ।

समर्पण समारोह

यह समारोह विहार के उद्घाटन के समय अथवा विहार में तथागत की मूर्ति की स्थापना करते समय किया जाता है। ऐसे समय पर वातावरण अति शांत एवम् सुखद रहना चाहिए। न तो ऊच्च स्वर में कर्कश आवाज के साथ लाउडस्पीकर से गाने बजाने चाहिए और न अन्य किसी प्रकार की कोई गडबड करनी चाहिए। सिनेमा आदि के गाने बिलकुल नहीं बजाने चाहिए जो समयानुकूल सार्थक नहीं हैं। अपितु मनमोहक उत्तम शास्त्रीय संगीत शहनाई वादन आदि बजाना उत्तम है।

प्रथमत: पूजा स्थान योग्य प्रकार सजाना चाहिए और उसके पश्चात सभी उपस्थित समाज को तीन वार विधिवत पंचांग प्रणाम करना अपेक्षित है अथवा संख्या एवम् समयानुसार प्रणाम करें। तब सभी सामुहिक रूप से त्रिसरण, पंचशील व सकारात्मक पंचशील बोले। उसके पश्चात विधिकर्ता को 'समर्पण 'समारोह कार्यक्रम पहले बोलना है और शेष सभी उपस्थितों को पीछें- पीछें उसका अनुसरण करना है। इसके पश्चात विधिकर्ता ने बुद्ध पूजा, त्रिरत्न वन्दना, महामंगल सुत्त, जयमंगल अट्टगाथा, करणीयमेत्त सुत्त के उपरान्त धम्मपालन गाथा

कहकर समारोह सम्पन्न करना चाहिए ।**धम्मपालन** गाथा के पहले प्रवचन किया जाए ।

समर्पण समारोह : -

हम यह क्षेत्र त्रिरत्नों को समर्पित करते हैं ।
मानवी सम्बोधि का आदर्श
ऐसे बुद्ध को
हम यह क्षेत्र समर्पित करते हैं ।
जिस धम्ममार्ग के आचरण हेतु हम सिद्ध हुए हैं,
ऐसे धम्म को
हम यह क्षेत्र समर्पित करते हैं ।
जहाँ आपस में कल्याण मैत्री का आनंद हम लेते हैं,
ऐसे संघ को
हम यह क्षेत्र समर्पित करते हैं ।
यहाँ किसी भी व्यर्थ शब्दोंका उच्चारण ना हो ।
न यहाँ चंचल विचारों से हमारे मन
कंपीत हो ।
पञ्चशीलों के परिपालन के लिए,
ध्यान साधना के अभ्यास के लिए,

प्रज्ञा के विकास के लिए,
और संबोधि की प्राप्ति के लिए,
हम यह क्षेत्र समर्पित करते हैं ।
भले ही बाह्य जगत में संघर्ष प्रदीप्त हो,
परन्तु यहाँ मात्र शान्ति रहे ।
भले ही बाह्य जगत द्रेषाग्नी से भभक रहा हो,
परन्तु यहाँ मात्र मैत्री रहे ।
भले ही बाह्य जगत दु:ख प्लवित हो,
परंतु यहाँ मात्र आनन्द रहे ।
केवल पवित्र समझे गये ग्रंथो के पठन से नहीं;
अथवा पवित्र समझे गये जल के सिंचन से हि नहीं,
बल्कि सम्बोधि प्राप्ती के प्रयासों द्वारा,
हम यह क्षेत्र समर्पित करते हैं ।
इस परिमण्डल के सभी ओर,
इस पवित्र क्षेत्र के सभी ओर,
परिसुद्धी के विमल कमलदल खिले ।
इस परिमण्डल के सभी ओर
इस पवित्र क्षेत्र के सभी ओर,
दृढ़ संकल्पों का वज्र-तट खड़ा रहे ।
इस परिमण्डल के सभी ओर

इस पवित्र क्षेत्र के सभी ओर
संसार का निर्वाण में परिवर्तन करनेवाली,
अग्निज्वाला प्रदीप्त हो ।
यहाँ बैठकर, यहाँ अभ्यास कर,
हमारा मन 'प्रबुद्ध' बने ।
हमारे विचार 'धम्म' बने
और हमारे आपसी सम्बन्ध 'संघ' बने ।
सभी प्राणियों के सुख के लिए,
और सभी प्राणियों के हित के लिए,
काया, वाचा, और मन से
हम यह क्षेत्र समर्पित करते हैं ।
(पूज्य महास्थविर संघरक्षितजी द्वारा रचित
इंग्लिश पाठ का हिन्दी अनुवाद)

नोट : स्मरण रहें की बौद्ध विहार धम्म संस्कारों के केंद्र होते हैं । उन्हे राजकारण, गुटबाजी और सत्तास्पर्धा के केंद्र होने से बचाना चाहिए । वे सभी जनों के लिए हमेशा मुक्त रहने चाहिए । विहारों की प्रबंध-व्यवस्था सुशील, विनम्र एवं धम्मजीवन जीनेवाले सदाचारी लोगों के हाथों में होनी चाहिए, दुराचरण और व्यसन करनेवालों के नहीं । उनका धम्मकार्य हेतु निरंतर प्रयोग होना चाहिए । बौद्धजनोंने इस दृष्टिसे हमेशा सावधानी बर्तानी चाहिए ।

नित्यपाठ

अपने अपने घर में उपासक /उपासिकां को प्रत्येक दिन प्रात: या शाम कालीन १५ मिनट से ४५ मिनट की अवधि के लिए 'आनापान सति' या 'मैत्री भावना' ध्यान का अभ्यास करना चाहिए। समयानुकूल त्रिसरण, पंचशील, सकारात्मक पंचशील, त्रिरत्न वन्दना, बुद्ध पूजा, जयमंगल अठ्ठगाथा, महामगल सुत्त, रत्तन सुत्त एवम करणीयमेत्त सुत्त का पठन करना अथवा करवाना चाहिए, ऐसा उपयुक्त समय मिलने पर ही संभव है। अत: उपयुक्त समय निकलना चाहिए। और 'भगवान बुद्ध और उनका धर्म 'ग्रंथ से अथवा अन्य बौद्ध ग्रंथो में से धम्म प्रवचन करना या करवाना चाहिए। धर्म सुनना और सुनाना यह उत्तम मंगल है इसका परिपालन करना चाहिए। तथा धम्मपालन गाथा अवश्य कहना चाहिए।

नोट :- ' आनापानसती ' अथवा ' मैत्री भावना ' ध्यान साधना बहुत सरल है, परन्तु बहुत ही परिणाम दायक। उपरोक्त ध्यान सीखने या इनका सही ढंग से अभ्यास करने के लिए धम्म शिबिर में समय समय पर जाना चाहिए।

परिशिष्ट -१

B. R. AMBEDKAR
M. A. Ph. D.
D. Sc. LL. D; D. Lit,
Barrister At Law.
Member Council of States.

26, ALIPORE ROAD
CIVIL LINE, NEW DELHI.
Dated The 4th dec. 1956

Dear Mr. Kardak,

Please refer to your letter of 12th November 1956. The Buddhist marriage ceremony is simple. There is no Hom and there is no Saptapadi. The essence of the ceremony lies in placing an earthern pot newly made between the bride and the bridegroom on stool and to fill it brimful with water. The bride and the bridegroom to stand on two sides of the pot. They should place a cotton thread in water pot and each hold one end of thread in their hands. Some one should sing the Mangal Sutta. Both bride and bridegroom should wear white clothes.

To,

Yours Sincerely,
(B. R. AMBEDKAR)

Shri V. S. Kardak
41-2; 3rd Marine Street, Bombay 2.

हिन्दी अनुवाद :-

सेवा में श्री. वी. एस. कर्डक,

41-2; 3rdमैरीन स्ट्रीट बम्बई,

कृपया अपने १२ नवम्बर 1956 के पत्र का अवलोकन करें । बौध्द विवाह संस्कार सरल है । बौध्द पध्दति के विवाह संस्कार में न तो हवन होता है और न सप्तपदी । इस प्रकार के विवाह संस्कार का सार तत्व इस बात में है कि एक नव निर्मित मिट्टी का घडा शुध्द जल से भरकर वधू व वर के बीच में एक स्टूल पर रख दिया जाय । इस घडे के दोनो ओर वधू व वर खडे हो जाए और एक कच्चे धागे को पानी में डुबा दिया जाय तथा उसका एक एक सिरा प्रत्येक को अपने हाथों में पकड लेना चाहिए । किसी एक ने वधू-वर को(त्रिसरण पंचशील देनाचाहिए) और महामंगल सुत्त का पठन करना चाहिए । इस अवसर पर वर-वधू को श्वेत वस्त्र परिधान करने चाहिए ।

आपका भवदीय,

बी. आर. अम्बेडकर

परिशिष्ट - २

विवाह संस्कार के समय सामग्री

बुध्द मूर्ति, बाबासाहेब का फोटो, कोरा मटका (घड़ा) सफेद धागा, मोमबत्ती, अगरबत्ती, फूल, फूलों के तीन घर (मालाएं), प्लेट, लोटा पानी से भरा हुआ पांच रंगो के दो दो मीटर के कपडें ।

मंगल सुत्र, अंगुठी , सिन्दूर आलपिन, माचिस लाऊडस्पीकर, माईक आदि ।

विधि - (१) कन्या तथा वर सफेद कपडे पहने, पंचांग प्रणाम करे, भगवान बुद्ध को पुष्प, बाबासाहेब को माला अर्पण करे ।

(२) वर पूजा स्थल के दाई ओर तथा वधू बाई ओर खडी रहे बैठे ।

(३) वधू पक्ष के साक्षको के वर पक्ष के मेहमानों का स्वागत करना चाहिए

(४) अब विधि कर्ता को त्रिसरण पंचशील विधायक पंचशील देना चाहिए ।

(५) कन्या (वधू) तथा वर को थोडा तिरछा खडा करे और उनके हाथ में कच्चे-धागे का एक एक सिरा पकडवा दे तथा एक सिरा मटके में भरे पानी में रहना चाहिए ।

(६) विधिकर्ता को बुद्ध पूजा, त्रिरत्न वन्दना करना चाहिए ।

(७) अब धागे छोड देने चाहिए तथा वर, कन्या को मंगलसुत्र पहनाए और सिंदूर से भांग भरे ।

यहाँ पर ही वर की पांच प्रतिज्ञाए करायें ।

(a) इसके बाद कन्या (वधू) वर को अंगूठी पहनाए तथा वधू की पांच प्रतिज्ञाए भी साथ में करे ।

(b) वर तथा वधू अपने बाहे हाथ से एक खाली प्लेट पकड़े तथा प्लेट के ऊपर वर का दाहिना हाथ सीधी अवस्था में तथा वधू का पट अवस्था में रखना चाहिए और विधिकर्ता को धीरेधीरे जल हाथों पर छोडना चाहिए तथा भवतु सब्ब मंगलम् - - - - - - - - आदि बोलना चाहिए

(१०) अब हाथ हटा लेना है तथा कच्चे धागे के कुछ टुकडे तोडकर वर-वधू के हाथों में बान्धे ।

(११) उपस्थित समाज के सभी व्यक्तियों को फूल वितरित करे और वर तथा वधू के हाथ में फूलों के हार दे देना चाहिए ।

(१२) विधिकर्ता को यहाँ महामंगल सुत्त बोलना चाहिए ।

(१३) उसके उपरान्त जोर जोर से तीन वार साधू साधू शब्दों का

उद्बोधन इस प्रकार करे कि पहले साधू पर वधू वर को माला पहनाए, दूसरे साधू पर वर वधू को माला पहनाए, और तीसरे साधू पर सभी ने वर-वधू को आशिर्वाद के साथ उनपर फूलों की वर्षा करे तथा धम्मपालन गाथा कहकर समाप्त करे

(१४) अब दोनो पक्षों के मेहमान खाना आदि खाये। तथा नव दम्पति को उपहार भेंट देकर ससम्मान विदा करें।

With bad advisors forever left behind,
From paths of evil he departs for eternity,
Soon to see the Buddha of Limitless Light
And perfect Samantabhadra's Supreme Vows.

The supreme and endless blessings
of Samantabhadra's deeds,
I now universally transfer.
May every living being, drowning and adrift,
Soon return to the Pure Land of
Limitless Light!

~The Vows of Samantabhadra~

I vow that when my life approaches its end,
All obstructions will be swept away;
I will see Amitabha Buddha,
And be born in His Western Pure Land of
Ultimate Bliss and Peace.

When reborn in the Western Pure Land,
I will perfect and completely fulfill
Without exception these Great Vows,
To delight and benefit all beings.

~The Vows of Samantabhadra
Avatamsaka Sutra~

DEDICATION OF MERIT

May the merit and virtue
accrued from this work
adorn Amitabha Buddha's Pure Land,
repay the four great kindnesses above,
and relieve the suffering of
those on the three paths below.

May those who see or hear of these efforts
generate Bodhi-mind,
spend their lives devoted to the Buddha Dharma,
and finally be reborn together in
the Land of Ultimate Bliss.
Homage to Amita Buddha!

NAMO AMITABHA
南無阿彌陀佛

《印度HINDI & PALI文：課誦本》
財團法人佛陀教育基金會 印贈
台北市杭州南路一段五十五號十一樓
Printed and donated for free distribution by
The Corporate Body of the Buddha Educational Foundation
11F., 55 Hang Chow South Road Sec 1, Taipei, Taiwan, R.O.C.
Tel: 886-2-23951198 , Fax: 886-2-23913415
Email: overseas@budaedu.org
Website:http://www.budaedu.org
Mobile Web: m.budaedu.org

Printed in Taiwan
3,000 copies; April 2015
IN018-13132